कैलेण्डर का आखिरी पन्ना

रामकुमार वर्मा

राजकमल प्रकाशन
नयी दिल्ली • पटना

अनुक्रम

सोन का वरदान

पात्र-परिचय

(प्रवेशानुसार)

सुगात्र : सम्राट् बिन्दुसार के पुत्र और सम्राट् अशोक के बड़े भाई

सुदत्त : सम्राट् अशोक का छोटा भाई

चंडगिरिक : सम्राट् अशोक का अंगरक्षक

सल्लाहक : सम्राट् अशोक के अमात्य

सम्राट् अशोक : स्वर्गीय सम्राट् बिन्दुसार के पुत्र और मगध के सम्राट्

सुसीम : सम्राट् अशोक के बड़े भाई

सुहास : ,, ,,

सुबेल : ,, ,,

सेवक आदि

सोन का वरदान

[दृश्य—सोन नदी की समतल भूमि। मध्य में एक झुका हुआ पेड़ जिसका तना आसन की भाँति बैठने का काम दे सकता है। दाहिनी ओर बिखरी हुई शाखाओं वाला दूसरा पेड़ है, जिसकी दो शाखाओं में इतना अन्तर है कि उनके बीच में चन्द्र का बिम्ब दीख सकता है। स्थान-स्थान पर छोटी-मोटी झुरमुटें हैं जो कभी-कभी पैरों में उलझ जाती हैं। भूमि उपजाऊ होने के कारण हरीतिमा से परिपूर्ण है। गहरी सन्ध्या का समय है। आज कृष्णपक्ष की तृतीया है। अभी तक चन्द्रोदय नहीं हुआ है; किन्तु समीप काष्ठ-प्राचीर पर लगा हुआ दीप-स्तम्भ इस स्थान पर हलका-सा आलोक फेंक रहा है। पूर्व दिशा में चन्द्रोदय के पूर्व की आभा दीख पड़ने लगी है। वातावरण सुनसान है। कभी-कभी सीताध्यक्ष (कृषि विभाग के अध्यक्ष) का सेवक 'सा···ब···धा···न'

की आवाज़ देता है, जो वायु में गूंजती हुई क्रमशः धीमी हो जाती है। यह एकान्त जैसे युद्ध के पूर्व का आतंक लिये हुए है। परदा उठने पर सुगाम और सुदत्त बड़ी सावधानी से धीरे-धीरे आगे बढ़ते हुए दीख पड़ते हैं। वे कभी-कभी दायें और बायें भी झुककर देखते हैं कि इस स्थान पर अन्य कोई तो नहीं है। सुगाम और सुदत्त राजकुमार हैं। सुगाम के वस्त्र नीले और सुदत्त के पीले चीनांशुक के बने हुए हैं। दोनों के हाथ में कृपाण है। सुगाम पूर्व की ओर गहरी दृष्टि से देखते हुए सुदत्त से बात आरम्भ करते हैं।]

सुगाम : अभी चन्द्रोदय नहीं हुआ ?

सुदत्त : (आकाश की ओर देखते हुए) अभी तक चन्द्र के दर्शन नहीं हुए।

सुगाम : तो हमें चन्द्रोदय की प्रतीक्षा करनी है। उसी समय इस सोन नदी के तट पर पाटलिपुत्र को उसका योग्य शासक मिलेगा। उत्साही, कृतज्ञ, वीर जो राज्यश्री को अपने वश में रख सके; जिसमें दैवी बुद्धि और दैवी शक्ति हो।

सुदत्त : (वृक्ष का सहारा लेते हुए ठण्डी सांस भरकर) आह ! ये सब लक्षण हमारे पिता सम्राट् बिन्दुसार में थे ! कौन जानता था कि भाग्याकाश का ऐसा तेजस्वी नक्षत्र इतने शीघ्र अस्त हो जायेगा !

सुगाम : (टहलने से रुककर) करुणा का अवकाश नहीं है, सुदत्त ! उसके लिए हमारी माताओं की आंखों में सागर से भी अधिक जल है। उस सागर में राज्य की

नौका नही डूब सकती। हमें आज पाटलिपुत्र के योग्य शासक का निर्णय करना ही है। मैं सभी भाइयों की सहमति प्राप्त कर चुका हूँ। केवल तुम्ही शेष रह गये हो।

सुदत्त : (व्यंग्य से) और मेरे अतिरिक्त भी कुछ शेष रह गया है?

सुगाम : तुम्हारे अतिरिक्त? तुम्हारे अतिरिक्त···कुछ नही। (कुछ सोचकर) हाँ, मन्त्रिमण्डल सम्भवत: हमारे पक्ष में नही है, किन्तु इसकी हमे चिन्ता नही। कृष्णपक्ष चन्द्र की कलाएँ छीन सकता है, चन्द्र को मिटा नही सकता।

सुदत्त : जीवन की तृष्णा जिसमे है, वह मिटकर भी नही मिटता। तो इस कृष्णपक्ष के क्रोड़ से चन्द्र का उदय होगा?

सुगाम : अवश्य, यह तो प्रकृति का सत्य है।

सुदत्त : तो यह प्रकृति का सत्य किस व्यक्ति पर घटित होगा?

सुगाम : यह व्यक्ति होगा, मगध का सम्राट्।

सुदत्त : स्पष्ट कहो, सुगाम! मगध का सम्राट् कौन होगा?

सुगाम : यही तो सोन की लहरें निर्णय करेंगी।

सुदत्त : मनुष्य का भाग्य ये लहरें बनायेंगी, जो एक कंकडी के गिरने से हिचकी ले उठती है! सुगाम! स्पष्ट कहो, तुम सम्राट् होना चाहते हो?

सुगाम : (कृपाण टेककर) मैं?

सुदत्त : हाँ, तुम! सुगाम! हो सकते हो। सम्राट् बिन्दुसार के साहसी सुपुत्र! मेरे ज्येष्ठ भ्राता! और···और नाम भी बुरा नही रहेगा···एकराट् विजिगीषु राजर्षि श्री सुगाम।

सुगाम : मैं व्यंग्य नही सुनना चाहता, सुदत्त! यदि मैं सम्राट् होना चाहूँ तो कोई शक्ति मुझे रोक नही सकती।

वर्षाकाल में बादल आकाश में स्वयं ही आते हैं और जल की वर्षा करते हैं। आकाश बादलों से भिक्षा नहीं माँगता। उसी प्रकार मैं भी राज्यश्री की भिक्षा नहीं माँगूँगा। राज्यश्री स्वयं मेरे पास आयेगी, किन्तु··· एक बात पूछूँ··· (सहसा) तुम सम्राट् होना चाहते हो?

सुदत्त : मैं? (ज़ोर से अट्टहास कर) मैं?

सुगाम : इतने ज़ोर से मत हँसो। सुदत्त!···यह सुनसान कहीं चौंक न उठे। यह एकान्त कहीं मन्त्रिमण्डल के पक्ष में न हो! यह एक विश्वस्त प्रश्न है कि तुम सम्राट् नहीं होना चाहते।

सुदत्त : (फिर हँसकर) मैं? इसी सोन नदी के किनारे हम दोनों का द्वन्द्व-युद्ध हो और मगध के योग्य शासक का निर्णय। इसी इच्छा से तुम मुझे यहाँ लाये हो? किन्तु सुगाम! मैं···मैं द्वन्द्व-युद्ध नहीं करूँगा। अपनी माताओं की अश्रु-धारा में किसी भाई की रक्त-धारा नहीं मिलाऊँगा। मैं सम्राट्-पद के लिए द्वन्द्व-युद्ध नहीं करूँगा। पाटलिपुत्र विपत्तियों में डूब रहा है। मैं उस पर अपने कृपाण का बोझ नहीं रखूँगा। हाँ···तुम सम्राट् बनो। पाटलिपुत्र के योग्य शासक! मैं जीवन-भर अपनी माताओं की सेवा करूँगा।

सुगाम : (लम्बी साँस लेकर) साधु! सुदत्त! तो तुम सम्राट् पद के लिए उत्सुक नहीं हो?

सुदत्त : उत्सुक कौन नहीं होगा? किन्तु मैं नहीं हूँ।

सुगाम : तो यदि इस समय मैं सम्राट् न बनूँ और किसी अन्य भाई को बनाना चाहूँ तो तुम उसे सम्राट् मानोगे?

सुदत्त : किसे सम्राट् बनाओगे?

सुगाम : मैं पहले तुम्हारी सहमति चाहता हूँ।

सुदत्त : सोचकर बताऊँगा।

सुगाम : (तीव्रता से) मैं तुम्हारा विश्वास चाहता हूँ, सुदत्त!

हाँ या नहीं ! तीर लक्ष्य पर सीधा जाता है, वह आकाश में विहार नहीं करता। तुम्हारा उत्तर सीधा होना चाहिए।

सुदत्त : और यदि टेढ़ा प्रश्न मैं पूछूँ तो उत्तर दोगे ? पाटलिपुत्र का सम्राट् कौन होगा·· स्पष्ट उत्तर दो सुगाम !

सुगाम : यह सोचकर बताऊँगा।

सुदत्त : मेरी तरह तुम भी सोचकर बताओगे ? मैं बिना सोचे बतला सकता हूँ···मगध का भावी सम्राट् होना चाहता है—सुगाम।

सुगाम : (मुस्कराकर) तुम अन्तर्यामी ज्ञात होते हो, सुदत्त ! सभी भाइयों का मत मेरे पक्ष में है, किन्तु इस समय मुझे पाटलिपुत्र की राजनीति की रक्षा करनी है। भावी सम्राट् को कुछ त्याग भी तो करना चाहिए। हमारी राजनीति कुछ समय के लिए एक दूसरा सम्राट् चाहेगी।

सुदत्त : नहीं, मैं तो सुगाम को ही सम्राट् मानूँगा। मुझे उसका नाम बहुत प्रिय है। सम्राट् सुगाम। न जाने कितने अच्छे ग्राम इस नाम में ही निवास करते हैं।

सुगाम : साधु ! किन्तु कुछ दिन धैर्य रखो। प्यारे भाई सुदत्त ! मेरी प्रार्थना है कि कुछ दिनों के लिए एक अन्य भाई को सम्राट् स्वीकार करो।

सुदत्त : किसे ?

सुगाम : जो इस समय सबसे अधिक वीर है।

सुदत्त : अशोक ?

सुगाम : तुम काँप क्यों उठे, सुदत्त ?

सुदत्त : अशोक के नाम से क्यों काँपूँगा ? वह भी तो हमारा भाई है। उसने उज्जयिनी का शासन कितनी योग्यता से सम्हाला है। जब वह बोलता है तो ज्ञात होता है जैसे आकाश उसका साथ दे रहा है।

सुगाम : तुम बहुत दुर्बल-हृदय हो, सुदत्त ! इसीलिए तुम्हें सुदृढ़

करने और तुम्हारा विश्वास पाने के लिए मैं तुम्हें यहाँ लाया हूँ। देखो, (एक-एक शब्द पर रुक-रुककर दृढ़ता से)—इसी स्थान पर आज हम सब अशोक का वध करेंगे। (आतंक मुद्रा)

सुदत्त · वध करेंगे ? क्यों ? उसका अपराध ?

सुगाम : उसने अपने सबसे ज्येष्ठ भ्राता सुसीम का अपमान किया है।

सुदत्त . किस प्रकार अपमान किया ? कुछ अपशब्द कहे या तुम्हारी तरह कुछ राजनीतिक वाक्यों का प्रयोग किया ?

सुगाम : राजनीतिक वाक्य तो नहीं कहे; किन्तु बड़े भाई के रहते अपने को सम्राट् घोषित कर दिया।

सुदत्त · सम्राट् घोषित कर दिया ? (काँपता है)

सुगाम · तुम फिर काँप उठे ? तुम अशोक से डरते हो ?

सुदत्त : डरता तो नहीं हूँ, किन्तु उसके साहस की प्रशंसा करता हूँ।

सुगाम · सुनो, सुदत्त ! अब तुम्हें सुसीम की प्रशंसा करनी होगी। स्वर्गीय पिता के वात्सल्य के सबसे बड़े अधिकारी ! वे कुछ समय के लिए पाटलिपुत्र के सम्राट् होंगे। तुम्हें हमारे साथ उनका साथ देना होगा। दोगे ? वचन दो।

सुदत्त . (सोचता हुआ) अपने सबसे बड़े भाई सुसीम ? पर वे तो तक्षशिला का विद्रोह शान्त करने गये हैं। सम्राट् ने उन्हें वहाँ भेजा था।

सुगाम : वे विद्रोह शान्त कर वहाँ से लौट भी आये। आज प्रातः सूर्य के साथ उन्होंने पाटलिपुत्र में प्रवेश किया। विद्रोह तो उन्होंने एक दिन में शान्त कर दिया। उन्हें देखते ही नागरिकों के सिर श्रद्धा से झुक गये। उन्होंने हाथ जोड़कर कहा—कुमार ! हमें सम्राट् से या आपसे असन्तोष नहीं है। कार्यान्तिक और अन्तपाल हमें कष्ट देते हैं। युवराज सुसीम ने कार्यान्तिक और अन्तपाल को कारा-

गार में डाल दिया और उसी क्षण विद्रोह शान्त हो गया। कितनी दैवी शक्ति है उनमें ? आचार्य चाणक्य ने अपने अर्थशास्त्र में सम्राट् को दैवी शक्ति-सम्पन्न माना है। इसी दैवी शक्ति के कारण वे सच्चे अर्थ में सम्राट् होंगे।

सुदत्त : (सिर हिलाते हुए) हाँ, सम्राट् तो हो सकते हैं; किन्तु मन्त्रिमण्डल उनसे रुष्ट है। एक बार उन्होंने अमात्य खल्लाहक का अपमान कर दिया था।

सुगाम : खल्लाहक जन्म से ही खल है तो बेचारे सुसीम क्या करें ? खलों को अनुशासन में रखना सज्जनों का धर्म है।

सुदत्त : फिर भी अमात्य (संकेत करते हुए) उस दीप-स्तम्भ की तरह है जिसका आधार पाकर राज्यश्री प्रकाश फैलाती है।

सुगाम : हाँ, स्तम्भ ही है; जो जड़ता का प्रतीक है।

सुदत्त : फिर भी अमात्य समान धरातल से ऊँचा है।

सुगाम : सौ अमात्य भी जुड़ जायें, तो वे आकाश से ऊँचे नहीं हो सकते सुदत्त ! जिसमें तारों का संगठित प्रकाश है। हम सब भाइयों की संगठित शक्ति का सामना क्या अमात्य-मण्डल कर सकता है ? अमात्य-मण्डल अमात्य-मण्डल ही है और भाइयों की शक्ति ऐसा आलोक-मण्डल है, जो मनुष्य की शक्ति से धूमिल नहीं हो सकता। दीपकों का समूह भी कहीं तारों की समता कर सकता है ? और सुनो, सुदत्त ! मन्त्रिमण्डल का संगठन तो सम्राट् करता है ! हम लोगों की सहायता से सुसीम सम्राट् बनकर एक नये मन्त्रिमण्डल का संगठन करेंगे और सबसे बड़ी बात यह होगी कि···

सुदत्त : सबसे बड़ी बात क्या होगी ?

सुगाम : सबसे बड़ी बात यह होगी कि···उस मन्त्रिमण्डल में

होंगे हम और तुम...

सुदत्त : तुम और हम ? यह तो बड़ी अच्छी बात होगी ! दो नेत्रों की तरह हम और तुम सम्राट् सुसीम का मार्ग-दर्शन करेंगे। सुसीम की मुझ पर कृपा भी है। एक बार मुझसे हँसकर कहने लगे—सुदत्त ! तुम्हारे नाम के अनुरूप मैं तुम्हें कुछ देना चाहता हूँ।

सुगाम . तो अब वह समय आ गया है, सुदत्त ! वे तुम्हें अपने नवीन मन्त्री का पद प्रदान करेंगे। बोलो, हमारा साथ दोगे ?

सुदत्त · इसी प्रकार का लालच, सुगाम ! तुमने अन्य भाइयों को दिया होगा। तभी वे सब तुमसे सहमत हैं। सुसीम के नाम से सम्भवतः तुम पाटलिपुत्र का शासन करोगे।

सुगाम (तीव्र स्वर में चिल्लाकर) सुदत्त !

सुदत्त · (डरकर) शब्दों पर मुझे अधिकार नहीं है, सुगाम ! कुछ कहना चाहता हूँ, कुछ मुँह से निकल जाता है। मुझे कुछ डर लगता है। (सोचकर) अच्छा, साथ दूँगा तुम्हारा। मुझे चाहे अमात्य-पद मिले या न मिले, बोलो, कैसे साथ देना होगा ?

सुगाम : आज कृष्णपक्ष की तृतीया है (पूर्व आकाश की ओर देखकर), चन्द्र के उदय होने में कुछ ही विलम्ब होगा। मुझे मध्याह्न में गुप्तचरों से सूचना मिली थी कि आज चन्द्रोदय होने पर अशोक अमात्य खल्लाटक के साथ कुछ विशेष मन्त्रणा करने के लिए इसी स्थान पर आयेंगे। उसी समय हम सब मिलकर उन पर आक्रमण करेंगे और या तो उनका वध करेंगे; या उन्हें कारा-गार में डाल देंगे।

सुदत्त : हम सब मिलकर एक पर आक्रमण करेंगे ? यह कौन-सी राजनीति है ?

सुगाम : यह सिंहासन प्राप्त करने की राजनीति है।

सुदत्त : (मुस्कराकर) तो फिर यह राजनीति नहीं व्याजनीति है।

सुगाम : (तीव्रता से) सुदत्त ! यह परिहास का समय नहीं है। चन्द्रोदय होना ही चाहता है।

सुदत्त : अच्छी बात है। चकोर की भाँति देखूँगा—(पूर्व की ओर देखते हुए) चन्द्रोदय कब होता है।

सुगाम : उसी समय कुमार सुसीम अपने साथियों सहित अपने सम्राट् होने की घोषणा करेंगे। तुम्हें उनके जयकार में सम्मिलित होना पड़ेगा।

सुदत्त : मुझे तो जयकार में सम्मिलित होना है, चाहे वह तुम्हारा हो, चाहे सुसीम का।

सुगाम : (तीव्र दृष्टि से) यह जयकार सुसीम का होगा।

सुदत्त : तो सुसीम के जयकार में भाग लूँगा। अभी बोलो, 'कुमार सुसीम की जय' ! मैं उसमें अपना कण्ठ-स्वर मिलाऊँगा।

[बाहर से किसी के आने का शब्द।]

कोई आ रहा है, सुगाम ! तुम मुझे यहाँ क्यों ले आये ? मैं सन्ध्या समय अपरिचितों को युद्ध का अवसर नहीं देता। तुम जानते हो, सुगाम ! करुणा के क्षणों में मुझे वीरता अच्छी नहीं लगती।

सुगाम : इस ओर चले आओ, सुदत्त (दोनों दाहिनी ओर के पेड़ के समीप जाते हैं। अशोक के अंगरक्षक चंडगिरिक का प्रवेश। उसके हाथ में कृपाण है।)

चंडगिरिक : (सैनिक ढंग से) कौन है यहाँ ?

[कोई उत्तर नहीं मिलता।]

चंडगिरिक : (तीव्रता से पुन:) शस्त्र या शास्त्र की परीक्षा देनेवाला कौन है यहाँ ?

सुगाम : (आगे बढ़कर) तुम्हारे प्रणाम के अधिकारी कुमार सुगाम और कुमार सुदत्त।

चंडगिरिक : प्रणाम करता हूँ, कुमार !

सुदत्त : तुम सम्भवतः मुझे भी प्रणाम करोगे ।

चंडगिरिक : दो नेत्रों के लिए एक ही दृष्टि होती है, कुमार ! किन्तु इस समय सोन नदी के तट पर कुमारों को किस कार्य के निमित्त कष्ट उठाना पड़ा ?

सुगाम : प्रश्नकर्ता अपना परिचय प्रस्तुत करे ।

चंडगिरिक : चंडगिरिक, श्रीमन् ! सम्राट् अशोक का अंगरक्षक ।

सुगाम : उज्जयिनी का करमौलि अशोक कहो…सम्राट् अशोक नहीं ।

चंडगिरिक : श्रीमन् ! आज प्रातः निश्चय हो चुका है कि स्वर्गीय सम्राट् बिन्दुसार के स्थान पर…

सुगाम : वाक्य पूर्ण न हो, चंडगिरिक ! स्वर्गीय सम्राट् के ज्येष्ठ पुत्र युवराज सुसीम पाटलिपुत्र में प्रवेश कर चुके हैं; उनके रहते किसी को अधिकार नहीं है कि वह एकराट् बिन्दुसार का सिंहासन कलुषित करे । सम्राट् होने के वास्तविक अधिकारी युवराज सुसीम हैं ।

चंडगिरिक : जो निर्णय अमात्य-मण्डल से हुआ है, वह सर्वमान्य है, श्रीमन् !

सुगाम : सम्राट् के निधन के साथ अमात्य-मण्डल भी समाप्त हो जाना चाहिए । पूर्णिमा के चन्द्र के साथ तारे भी अस्त हो जाते हैं । मैं इस अमात्य-मण्डल के किसी भी अमात्य को महत्त्व नहीं देता ।

चंडगिरिक : इसका उत्तर कोई अमात्य ही दे सकता है, अंगरक्षक नहीं । मैं यही निवेदन करना चाहता हूँ कि इस स्थान की अपेक्षा श्रीमान् के लिए राजमहल अधिक उपयुक्त स्थान होगा ।

सुदत्त : सुगाम ! माताएँ भी हम लोगों की प्रतीक्षा कर रही होंगी ।

सुगाम : और मुझे इसी स्थान पर अशोक और सम्राट् सुसीम की एक साथ प्रतीक्षा करनी है । चंडगिरिक ! तुम अपने को

वन्दी समझो। इस अशिष्टता के लिए कल न्यायाधिकरण में तुम पर विचार होगा।

चंडगिरिक : श्रीमन् ! न्यायाधिकरण पर एकमात्र अधिकार सम्राट् अशोक का है।

सुगाम : चुप रह, सम्राट् अशोक को रटनेवाला दादुर ! तू दुर्विनीत भी है। द्वन्द्व के लिए प्रस्तुत हो।
(नेपथ्य से) चंडगिरिक, तुम अपने स्थान पर रहो !

चंडगिरिक : श्रीमन् !

[अमात्य खल्लाहक का प्रवेश।]

खल्लाहक : किससे बातें कर रहे हो ? (सामने सुगाम को देखकर) राजकुमार सुगाम और राजकुमार सुदत्त।

सुगाम : अमात्य ! चंडगिरिक ने राज-मर्यादा भंग की है। मैं उससे द्वन्द्व चाहता हूँ।

खल्लाहक : यह राजकुमार की मर्यादा के अनुकूल नहीं है, कुमार ! वह एक अंगरक्षक से द्वन्द्व करे। (चंडगिरिक से) चंडगिरिक ! कुमारों की मर्यादा अक्षुण्ण रहे।

चंडगिरिक : मर्यादा की सुरक्षा में ही सेवक का अस्तित्व है श्रीमन् !

सुगाम : और वह अस्तित्व क्षणमात्र में मिटा दिया जा सकता है, अमात्य ! चंडगिरिक का यह साहस कि वह हमसे कहे कि इस स्थान की अपेक्षा राजमहल आपके लिए अधिक उपयुक्त स्थान होगा ! कुमार सुदत्त इसके साक्षी हैं।

सुदत्त : साक्षी क्या ! चंडगिरिक प्रणाम करना भी नहीं जानता।

खल्लाहक : कुमार, चंडगिरिक का अपराध क्षमा हो। वह अंगरक्षक है। उसका कर्तव्य है कि जिस स्थान पर उसकी नियुक्ति हो, वह निरापद रहे।

सुदत्त : हमारे यहाँ रहने से स्थान निरापद नहीं समझा जायेगा ?

खल्लाहक : सम्राट् अशोक···

सुगाम : (बीच ही में तीव्रता से) सम्राट् अशोक ! सम्राट् अशोक ! किस विधान से उज्जयिनी का करमौलि

अशोक, मगध का सम्राट् अशोक हो सकता है ? यह एक भयानक षड्यन्त्र है।

खल्लाहक : शान्त ! राजकुमार ! आपके द्वारा राजमर्यादा भंग न हो। सम्राट् अशोक स्वर्गीय सम्राट् बिन्दुसार के वैसे ही पुत्र है जैसे आप या सुसीम।

सुगाम : तो मैं या सुसीम सम्राट् क्यों नहीं हो सकते ?

खल्लाहक : हो सकते हैं, किन्तु अमात्य-मण्डल का निर्णय ऐसा नहीं है।

सुगाम : वह अमात्य-मण्डल तो ऐसा निर्णय करेगा ही, जिसके नायक आप हैं। ऐसा अमात्य-मण्डल नष्ट कर दिया जायेगा।

खल्लाहक : राज्य का विधान एक खिलौना नहीं है, कुमार ! जिसे एक बालक अपने क्रोध में नष्ट कर दे। इस वाक्य का उत्तर······

सुगाम : (बीच ही में) उत्तर ? अभी सुसीम से मिल जायेगा। (सुदत्त से) चलो, सुदत्त !

सुदत्त : हाँ ! राजकुमार सुसीम ही इसका उत्तर देंगे और उनके कण्ठ मे हम लोगों का स्वर भी होगा और जैसा राजकुमार सुगाम ने कहा, उस स्वर में सुसीम का जय-जयकार भी होगा। हाँ ! चलो सुगाम !

सुगाम : अमात्य खल्लाहक ! थोड़ी देर अमात्य-पद की सन्ध्या में बादल की भाँति राग-रंजित हो लो। चन्द्रोदय होने पर तुम्हारे रंगों का कहीं पता भी नहीं चलेगा !

[सुदत्त के साथ शीघ्रता से प्रस्थान।]

खल्लाहक : (सुगाम और सुदत्त के जाने की दिशा मे देखते हुए) विद्रोह की जड़ें दूर तक फैल गयी हैं। ज्ञात होता है, कुमार सुगाम ने इसके लिए संगठन भी कर रखा है। मैं समझता हूँ, इसका पता सम्राट् अशोक को होगा।

चंडगिरिक : इसका पता सम्राट् को है, श्रीमन् !

खल्लाहक : इस विषय में उन्होंने कुछ कहा ?

चंडगिरिक : कहा, मुझे चिन्ता नहीं । विद्रोह की अग्नि को दीपों में सजाकर मैंने दीपावली का उत्सव मनाया है ।

खल्लाहक : (मुस्कराकर) साहस के अवतार हैं हमारे सम्राट् । इसीलिए अमात्य-मण्डल ने एक स्वर में निर्णय दिया है कि मगध के सिंहासन पर उनका ही अभिषेक हो । कल इसकी घोषणा होगी । सब भाइयों में वे ही सबसे अधिक शक्तिशाली और साहसी हैं ।

चंडगिरिक : (सिर झुकाकर) श्रीमन् !

खल्लाहक : किन्तु इस विद्रोह का शमन करना आवश्यक होगा । कुमार सुगाम अवश्य ही इस विद्रोह का दावानल दूर-दूर तक पहुँचायेंगे और कुमार सुसीम को नेता बनाकर कुछ अनिष्ट करने की बातें सोच रहे होंगे ।

चंडगिरिक : इन्हीं कुमारों से सेवक ने सुना कि राजकुमार सुसीम अन्य कुमारों के साथ सम्राट् पर आक्रमण करेंगे और···

(सम्राट् अशोक का प्रवेश । मांस-पेशियों से गठा हुआ शरीर । मुख पर तेज और नेत्र में आकर्षण । स्वर में स्पष्टता और वज्र-जैसी दृढ़ता । सम्राट् अशोक अंशुक की कसी हुई धोती पहने हुए हैं जिसके कमर के समीप-भाग में हंस-मिथुन के चिह्न हैं । कन्धों को ढकती हुई तथा बायीं बाहु पर होती हुई रेशमी चादर है जिसमें रत्नों के फुंदने लगे हुए हैं । चीनांशुक के बने हुए डोरीवाले कमरबन्द, जिनके सिरे छाती के समीप रत्न-संकट से कसे हुए हैं । शीर्ष-पट के साथ एक मयूरपक्ष के रंग का उष्णीष जिसके दोनों ओर एक-एक मोती की माला बँधी हुई है । पैर में त्रिपटल मंजीठ रंग के उपानह । हाथ में कृपाण ।)

अशोक : (प्रवेश करते ही) चंडगिरिक ! तुम यहाँ से जा सकते हो ।

खल्लाहक : (घूमकर) सम्राट् की जय !

चंडगिरिक : (झुककर) सम्राट् की जय !

अशोक : आदेश दुहराये नहीं जाते, चंडगिरिक !

चंडगिरिक : (झुककर) श्रीमन् ! (शीघ्रता से प्रस्थान)

खल्लाहक : किन्तु चंडगिरिक की यहाँ आवश्यकता होगी, सम्राट् !

अशोक : मेरी रक्षा के लिए ? (कुछ हंसते हुए) क्योंकि आपके अमात्य-मण्डल ने निर्णय किया है कि अशोक मगध के सम्राट् हों, और सम्राट् के लिए अंगरक्षक हों। किन्तु मैं समझता हूँ अमात्य ! वह सम्राट् भी क्या है जिसे अंगरक्षक की आवश्यकता हो ? (अमात्य खल्लाहक की मुद्रा गम्भीर है। उसकी ओर तिरछी दृष्टि से देखते हुए) बहुत गम्भीर हो गये, अमात्य ! सम्राट् तो वही है, जो सम्यक् रूप से विराज सके ! सन्तोष से प्रजा उसकी श्री-सराहना कर सके। उसके लिए अंगरक्षक की क्या आवश्यकता है ? अंगरक्षक की नियुक्ति तो प्रजा के प्रति अविश्वास है। प्रजा ऐसे राजा को क्या क्षमा कर सकती है ?

खल्लाहक : किन्तु इस समय परिस्थिति भयानक है। आपको भी यहाँ नहीं रहना चाहिए। परिस्थिति अत्यन्त भयानक है सम्राट् !

अशोक : (हँसकर) भयानक ? परिस्थिति भी कभी भयानक होती है, अमात्य ? मनुष्य की दुर्बलता का दूसरा नाम परिस्थिति है। जब मनुष्य विवश होकर कुछ नहीं कर सकता, तो वह सरलता से कह देता है, परिस्थिति अनुकूल नहीं है···भयानक है। मनुष्य ही परिस्थितियों का निर्माण करता है और निर्माण कर चुकने पर जब वह असफल हो जाता है, तो भाग्य को दोष देता है। अपने हाथ से अपनी ही शक्तियों की हत्या करता है और कहता है कि मैं अकेला हूँ।

खल्लाहक : आपके साहस की मैं प्रशंसा करता हूँ, सम्राट् ! किन्तु मैं कुछ निवेदन करना चाहता हूँ।

अशोक : अमात्य की वाणी विधान की वाणी है। मैं सुनूँगा।

खल्लाहक : आप जानते हैं सम्राट्, अमात्य-मण्डल ने जो निर्णय किया है, वह अन्य कुमारों को स्वीकार नहीं है। वे ज्येष्ठ कुमार सुसीम को सम्राट् बनाना चाहते हैं। इस गृह-विद्रोह के सम्बन्ध में ही परामर्श देने के लिए मैंने आपको इस एकान्त में निमन्त्रित किया था। राजमहल के तो कोने-कोने में अनन्त जिह्वाएँ, अनन्त नेत्र और अनन्त कान हैं। यह एकान्त ही मूक, अन्ध और बधिर है, किन्तु अब आपको यहाँ भी नहीं रहना चाहिए। यह एकान्त भी मुझे एक कच्छप की भाँति लग रहा है जो अपने विद्रोह का सिर अपने भीतर समेटकर बैठा हुआ है।

अशोक : मुझे उससे भय नहीं है अमात्य ! कच्छप भले ही कठोर हो, किन्तु वह भय से आक्रान्त भी है। भय ही उसे सिर समेटने के लिए बाध्य करता है ! वह चोरी से मास नोचता है, विषधर की तरह आक्रमण नहीं करता। मुझे ऐसे कच्छपों से भय नहीं है; मैं उनके मर्मस्थल को वेधना चाहता हूँ। हाँ, तुम मुझे कुछ परामर्श देना चाहते थे। पाटलिपुत्र की राजनीति के सम्बन्ध में···?

खल्लाहक : तो आपको सूचना है कि अन्य राजकुमार असन्तुष्ट है।

अशोक : हाँ, मुझे इस बात की सूचना है कि अन्य राजकुमारों को अमात्य-मण्डल के निर्णय से असन्तोष है। इस सम्बन्ध मे आपका और अमात्य-मण्डल का क्या निर्णय है ?

खल्लाहक : अमात्य-मण्डल इस सम्बन्ध में आपसे परामर्श के लिए उत्सुक है। जहाँ तक मेरा व्यक्तिगत निर्णय है, सम्राट् ! यह बिल्कुल स्पष्ट है और वह पाटलिपुत्र के हित मे

है। आज मुझे मगध की सेवा करते हुए बीस वर्ष से अधिक हो गये। स्वर्गीय सम्राट् की राजनीतिक मन्त्रणाओं का आसन मेरे परामर्श-निर्मित सिंहों के कन्धों पर था आचार्य चाणक्य के अर्थशास्त्र ने तो हमारा मार्ग प्रशस्त किया ही है, किन्तु अनेक परिस्थितियाँ ऐसी आयी हैं, जहाँ हमने राजनीति को सरस्वती की गुप्त धारा बनाकर विपक्षियों में भी संग्राम करा दिया है। किन्तु यह अन्तर्विद्रोह विपक्षियों की हिंसा से भी भयानक है।

अशोक : आपकी राजनीति पर हमें विश्वास है।

खल्लाहक : सम्राट् ! आज मगध में गृह-विद्रोह की ज्वाला भड़क उठी है। स्वर्गीय सम्राट् इस बात को स्वीकार करते थे कि सब भाइयों में आप सबसे अधिक शक्तिशाली हैं, किन्तु वे ज्येष्ठ कुमार सुसीम को समीप रहने के कारण अधिक चाहते थे। आप उज्जयिनी में ग्यारह वर्षों से थे। आपने अनेक विद्रोह शान्त किये, किन्तु कुमार सुसीम ने आपके शौर्य की सूचना सम्राट् तक पहुँचने भी नहीं दी। कुमार सुसीम सम्राट् का स्नेह पाकर धृष्ट और दुर्विनीत हो गये। कुमार सुगाम भी उन्हीं की भाँति निरकुश बन गये। जब तक्षशिला में विद्रोह हुआ तो सम्राट् आपको उज्जयिनी से तक्षशिला भेजना चाहते थे, किन्तु अमात्य-मण्डल जानता था कि वह विद्रोह राज्य-कर्मचारियों के प्रति है, सम्राट् के विरुद्ध नहीं। इसलिए आपके भेजे जाने की आवश्यकता नहीं समझी गयी और कुमार सुसीम को राज्य से दूर करने के लिए तक्षशिला भेज दिया गया।

अशोक : सुसीम शान्ति स्थापित कर आज प्रातः तक्षशिला से पाटलिपुत्र लौट भी आये ?

खल्लाहक : हाँ ! आज प्रात. वे लौट आये। उन्हें स्वर्गीय सम्राट्

के निधन की सूचना मिल चुकी थी,·इससे उन्हें आशंका थी कि अमात्य-मण्डल उनके स्थान पर कही कुमार अशोक को सम्राट् न बना दे।

अशोक : (मुस्कराकर) और आपके अमात्य-मण्डल ने अशोक को ही सम्राट् बनाया।

खल्लाहक : इस लिए कुमार सुसीम अन्य कुमारों के साथ मिलकर पाटलिपुत्र को विद्रोह की अग्नि मे भस्म कर देना चाहते हैं।

अशोक : विद्रोह में तो यही होगा। किन्तु इससे रक्षा का उपाय ?

खल्लाहक : मेरी दृष्टि में एक ही है।

अशोक : सुनना चाहता हूँ।

खल्लाहक : यदि इसे राजवंश की मर्यादा के विपरीत न समझा जाये तो···

अशोक : तो···?

खल्लाहक : उन पर शीघ्रातिशीघ्र नियन्त्रण लगा दिया जाये।

अशोक : सैनिक नियन्त्रण ?

खल्लाहक : हाँ, सम्राट् ! अन्यथा बढती हुई आग की लपटों की भाँति वे राज-मर्यादा की फूलती हुई बेलो को झुलसाते रहेंगे।

अशोक : इसके अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग नही है ?

खल्लाहक : वे सब प्रतिहिंसा के विष-दन्तों में मृत्यु का अभिशाप लिये हुए हैं। वे आप पर आक्रमण करना चाहते हैं। उन्हें इस बात की सूचना है कि आप इस समय यहाँ पर हैं। इसीलिए मैंने निवेदन किया कि अब आप यहाँ से शीघ्र ही लौट चलें। जब आपकी रक्षा के लिए अंग-रक्षक और एक सैनिक गुल्म की नितान्त आवश्यकता है, तब आपने अपने अंगरक्षक को यहाँ से जाने का आदेश दे दिया।

अशोक : (सोचते हुए) वे यहाँ मुझ पर आक्रमण करेंगे ?

खल्लाहक : निस्सन्देह ! कुमार सुगाम और कुमार सुदत्त यही ग्रमि-
सन्धि लेकर यहाँ से गये हैं। वे आपके आने के पूर्व
यहाँ थे। वे सब मिलकर किसी भी क्षण आप पर
आक्रमण कर सकते है। चन्द्रोदय होने ही वाला है।
वे इसी की प्रतीक्षा कर रहे होंगे। यही उनके आक्रमण
की वेला है।

अशोक : अन्धकार मे वे अपना आक्रमण अधिक सफलता के साथ
कर सकते है। विद्रोह का कृपाण तो अन्धकार की म्यान
मे रहता है।

खल्लाहक : इसीलिए सम्राट् ! परामर्श का समय चन्द्रोदय के
पश्चात् ही रखा गया था।

अशोक : तो चन्द्रोदय ही उनके आक्रमण की वेला है।

खल्लाहक : हाँ, सम्राट् !

अशोक : तो फिर अमात्य ! तुम भी यहाँ से जाओ।

खल्लाहक : मैं भी यहाँ से चला जाऊं ! मगध के सम्राट् को इस
एकान्त मे छोड़कर चला जाऊँ; जिससे विद्रोहियों का
मार्ग और भी सुगम हो जाये ? मेरे लिए यह सम्भव
नही होगा, सम्राट् ! यह राज-धर्म और सेवा-धर्म
दोनो ही के प्रतिकूल है।

अशोक : तो राज-धर्म भी कैसा है कि उसने अपने सम्राट् की
परीक्षा लिये बिना ही उसे सम्राट् बना दिया ? नदी
की गहराई परखी ही नही और उसमें अपनी विशाल
नौका छोड़ दी ? अमात्य-मण्डल को सम्राट् की परीक्षा
भी तो लेनी चाहिए थी ?

खल्लाहक : उज्जयिनी मे सम्राट् की परीक्षा अनेक बार ली जा
चुकी है।

अशोक : उज्जयिनी पाटलिपुत्र नही है, अमात्य ! उज्जयिनी
केवल पश्चिम-चक्र की राजधानी है और पाटलिपुत्र
समस्त मगध राज्य का केन्द्र है। यहाँ की परीक्षा

वास्तविक परीक्षा है।

खल्लाहक : फिर भी सम्राट् ! आपसे प्रार्थना है कि आप मुझे यहाँ से जाने का आदेश न दें। विद्रोह मे पाटलिपुत्र भस्म होने जा रहा है।

अशोक : मैं अमात्य को आदेश न देकर उनसे आग्रह करना चाहता हूँ कि वे मुझे एकान्त मे कुछ विचार करने का अवसर प्रदान करें।

खल्लाहक : जैसी आज्ञा ! (प्रस्थान)

अशोक : (टहलते हुए सोचते हैं) विद्रोह ! विद्रोह की अग्नि मे पाटलिपुत्र भस्म होने जा रहा है ! सम्राट् बिन्दुसार का पाटलिपुत्र ! सम्राट् चन्द्रगुप्त का···! (टहलते हुए पेड़ के समीप आते हैं। वे पूर्व के आकाश में देखते हैं) यह चन्द्र ! तो चन्द्रोदय हो गया ! आक्रमण की यही वेला है। कैसा आक्रमण होगा ! किसी ने आक्रमण कर चन्द्र की तीन कलाएँ भी काट ली हैं। (एक दिशा में चौंककर देखते हैं) कौन है ? (कोई उत्तर नहीं मिलता) पाटलिपुत्र मे चोर की तरह छिपनेवाला कौन है ?

सुगाम : (सामने आकर तलवार टेककर खड़ा होता है) मैं चोर नहीं हूँ अशोक !

अशोक : (आत्मीयता के स्वरों में) सुगाम तुम हो ! तो फिर चोर की तरह क्यों छिप रहे हो ? तुम मेरे भाई हो। स्वर्गीय सम्राट् बिन्दुसार के पुत्र। मगध राज्य के संरक्षक !

सुगाम : व्यंग्य-बाण मत चलाओ। शक्ति हो तो तुम तलवार का प्रयोग कर सकते हो।

अशोक : शक्ति भी है और तलवार भी है, किन्तु प्रयोग का अवसर मैं नहीं देखता। हाँ, तुम प्रयोग करो ! देखो, चन्द्रोदय हो गया। तुम्हारे आक्रमण की वेला यही तो है। देखूँ, तुम किस प्रकार आक्रमण करते हो।

सुगाम : मैं आक्रमण तो करूँगा ही, अशोक पहले यह जानना चाहता हूँ कि अमात्य सल्लाहक और अंगरक्षक चण्ड-गिरिक कहाँ है ?

अशोक : दो भाइयो के बीच में कोई बाहरी व्यक्ति नही होना चाहिए, सुगाम ! इसीलिए दोनो को ही यहाँ रहने की अनुमति मैंने नही दी। अब यहाँ केवल मैं हूँ और तुम हो। हम दोनो का जीवन, जीवन है; कोई प्रदर्शनी नहीं जो बाहरी व्यक्ति देखें।

सुगाम : अशोक ! तुम जानते थे कि मैं यहाँ आनेवाला हूँ !

अशोक : निस्सन्देह ! मैं अपने अन्य भाइयो की भी प्रतीक्षा कर रहा हूँ। वे सब कहाँ हैं ?

सुगाम : कही दूर नही होगे, किन्तु तुम जानते हो, इसका परिणाम क्या होगा ?

अशोक : भाइयो के मिलने का परिणाम बुरा नही होता, यह मैं जानता हूँ।

सुगाम : तुम साहसी हो, अशोक ! इसलिए मुझे तुम पर दया आती है। मैं नही चाहता कि भाइयों की क्रोधाग्नि में तुम भस्म हो जाओ।

अशोक : मैं भस्म हो जाऊँ ? असम्भव ! क्रोधाग्नि मे क्रोध करनेवाला व्यक्ति ही भस्म होता है। सुगाम ! मैं अपने भाइयो को क्रोधाग्नि में भस्म होने से रोकूँगा।

सुगाम : यह तुम्हारा साहस मात्र है, अशोक ! तुम्हारे लिए उचित होगा कि तुम मगध के सिंहासन से हट जाओ।

अशोक : अशोक आज तक अपने कर्तव्य से पीछे नही हटा है, सुगाम ! यदि अमात्य-मण्डल एक मत से मेरे सम्राट् होने का निर्णय न करता तो मैं दूसरे दिन ही उज्जयिनी के लिए प्रस्थान करता। पिता-श्री के निधन के पश्चात् मगध राज्य की सुरक्षा का प्रश्न मेरा पहला कर्तव्य है, जिसका पालन मैं जीवन के अन्तिम क्षणो तक करूँगा।

सुगाम : तुम्हारा यह झूठा अभिमान है। मैं तुम्हें सचेत करना चाहता हूँ, अशोक ! तुम युवराज सुसीम के मार्ग से हट जाओ।

अशोक : मुझे सुसीम के मार्ग का मोह नहीं है। मुझे अपना मार्ग प्रिय है; और यदि मैं अपने सत्य मे स्थिर हूँ तो प्रत्येक मार्ग मेरे लिए राजमार्ग है; भूमि का प्रत्येक खण्ड मेरे लिए सिंहासन है। और, सिंहासन उच्च नहीं है, सुगाम ! सिंहासन पर बैठने की योग्यता उच्च है। सुसीम सिंहासन को ही उच्च समझते हैं। यह मार्ग मेरा नहीं है।

सुगाम : फिर भी तुम्हारा मार्ग सुसीम के मार्ग को अवरुद्ध करता है। तुम इस मार्ग से हट जाओ, नहीं तो···

अशोक : नहीं तो···?

सुगाम : समस्त भाइयों की सम्मिलित शक्ति तुम्हें बलपूर्वक मार्ग से हटा देगी।

अशोक : मैं ऐसी शक्ति के दर्शन करना चाहता हूँ। जीवनभर मैंने शक्ति की उपासना की है। आज उसका सम्मिलित रूप देखकर मैं अपने को धन्य समझूँगा। कहाँ है वह सम्मिलित शक्ति ! उस सम्मिलित शक्ति का प्रयोग मैं भी देखना चाहता हूँ, सुगाम !

सुगाम : वीरवर अशोक ! मैं नही चाहता कि स्वर्गीय पिता-श्री का शुभ वंश भाइयों के रक्त से कलंकित हो। यदि तुम सुसीम के पक्ष में नही हो तो किसी अन्य भाई को सिंहासन पर बैठने का अवसर दे सकते हो। तुमने अपनी वीरता की ध्वजा समस्त पश्चिम-चक्र में फहराई है। तुम ऐसा कर सकते हो कि···यदि सुसीम योग्य नही है अर्थात् उसे सिंहासन के योग्य नही समझते तो···तो मैंने···अर्थात् मैंने···मार्ग, आदर्श पर चलने का प्रयत्न··· प्रयत्न नहीं···साधना की है···मैं···अर्थात् मैं···

अशोक : देखो, सुगाम ! अपने व्यक्तित्व पर बल दो···किसी

दूसरे का अनुकरण आत्महत्या है ।

सुगाम : (तीव्रता से) तो अब तुम्हारी हत्या की जायेगी अशोक! मैं तुम्हें सावधान करने आया था। तुम्हारे प्रति भाइयों का क्रोध अन्तिम सीमा पर पहुँच गया है।

अशोक : मनुष्य की शक्ति अन्तिम सीमाओं में शोभा नहीं पाती। अन्तिम सीमाओं को सन्तुलित करने में शोभा पाती है।

सुगाम . यह तुम्हारा अन्तिम निर्णय है ?

अशोक : मेरे धैर्य की परीक्षा न लो, सुगाम ! क्या तुम समझते हो कि मगध का सिंहासन किसी वणिक् की तुला है, जो शब्दों के भार से किसी ओर भी झुक सकती है ? यह सिंहासन मौर्य सम्राट् चन्द्रगुप्त का है, सम्राट् बिन्दुसार का है, जिनका साहस और प्रताप उसमें रत्नों की भाँति जड़ा हुआ है और इन रत्नों में देश का ही नहीं, विदेश का भी इतिहास प्रतिबिम्बित हुआ है।

[नेपथ्य में कोलाहल होता है।]

अशोक : यह कैसा कोलाहल ?

सुगाम : (व्यंग्य से) इसी कोलाहल में तुम्हारा इतिहास प्रतिबिम्बित होगा।

[नेपथ्य में एक स्वर—अशोक का वध करो !
दूसरा स्वर—पाटलिपुत्र का कलंक दूर हो !
तीसरा स्वर—अशोक को बन्दी करो !]

अशोक : (तीव्रता से कोलाहल की दिशा में देखकर) मैं प्रस्तुत हूँ !

[नेपथ्य में फिर हलचल होती है।]

सुगाम : (उच्च स्वर से) सम्राट् की जय !

['जय' का नाद गूँजते ही नेपथ्य से सुसीम अन्य चार भाइयों सहित तलवार की नोक सामने कर झपटते हैं।]

सुसीम : (तीव्रता से तलवार उठाकर) प्रतिहिंसा मेरे प्राणों में है !

मृत्यु मेरे हाथों में···आक्रमण करो !

[हलचल होती है ।]

अशोक : (गर्जन के स्वर में) सावधान ! सम्राट् बिन्दुसार के वंश के हिंसक पशु ! वहीं खड़े रहो !

[सब स्तम्भित होकर रुक जाते हैं ।]

अशोक : (वैसे ही गर्जन के स्वर में) यदि एक भी व्यक्ति आगे बढ़ा तो वह खौलते हुए तेल के कड़ाहे में झोंक दिया जायेगा !

[सब ठिठके हुए खड़े रहते हैं । केवल कुमार सुसीम आगे बढ़ते हैं ।]

सुसीम : किसका साहस है कि वह हमें खौलते हुए तेल के कड़ाहे में झोंक दे ?

अशोक : पाटलिपुत्र का एक-एक व्यक्ति यह साहस रखता है । और खौलते हुए तेल की एक-एक बूंद मांस में डूबकर हड्डियों को गलाने की शक्ति रखती है । तुम आगे बढ़ोगे ?

सुसीम : मैं ही नहीं···मेरे भाई भी आगे बढ़ेंगे ।

अशोक : तुम्हारे ये भाई ? जिन्हें तुमने विद्रोह के लिए भड़काया है ? जिन देवता-जैसे राजकुमारों को तुमने भेड़ियों का बाना पहनाया है ? पिता की मृत्यु पर टूटते हुए इनके आँसुओं से तुम अपना राज्याभिषेक कराना चाहते हो ? बोलो, सुसीम ! स्वार्थ की वेदी पर भाइयों की बलि देना हिंसा की पराकाष्ठा है या नहीं ?

सुसीम : हिंसक तुम हो ।

अशोक : भाइयों को अपने साथ-साथ तुम लाये हो, जिससे वे मेरी तलवार से कटें और तुम मुझसे सन्धि कर सिंहासन पर बैठो । तुम्हारा स्वार्थ ये भाई जानते हैं । इसीलिए ये भाई देखने में तुम्हारे साथ हैं, पर वास्तव में साथ नहीं हैं । राज्य में विद्रोह स्वार्थ के पैरों पर खड़ा होता है । इन पैरों की दिशा जानते हो, किस ओर है ? सुदत्त ! सुहास ! सुबेल ! तुम लोगों के पैर कांप रहे हैं । तुम्हारे

हाथों की तलवारें झुक रही हैं । राजनीति में विद्रोह वह हिम-खण्ड है जो अविश्वास की आँच मे गलकर बह जाता है । तुम्हारे माथे पर जो पसीना है, सुदत्त ! वह उसी का रूप है । उसे जल्द पोंछो ।

[सुदत्त बायें हाथ से माथे का पसीना पोंछता है ।]

सुसीम : (सुदत्त से सरोष) पसीना क्यों पोंछते हो ?

सुदत्त : (हकलाते स्वर से) अविश्वास···अविश्वास से गल··· गलकर बह रहा है ।

सुगाम : (चीखकर) अविश्वास ? कैसा अविश्वास ?

अशोक : (तीव्रता से) वह अविश्वास, जो तलवारों में कांपता है । वह अविश्वास, जो तलवार को कसकर पकड़ता है, किन्तु मुट्ठी ढीली की ढीली रह जाती है । वह अविश्वास, जो साहस कर बोलना चाहता है, किन्तु भूमि में गड़े लोहे पर की गयी चोट की भाँति गले मे कुण्ठित हो जाता है । स्पष्ट कण्ठ से कहो, सुसीम ! क्या कहना चाहते हो ? तुम्हारी वाणी अविश्वास से बोझिल हो रही है ।

सुसीम : मेरी वाणी बोझिल नही । मैं पूछता हूँ, मुझे खौलते हुए तेल मे झोंकने की शक्ति किसमे है ?

अशोक : मुझमें । उस शक्ति की परीक्षा लेना चाहते हो ? तुम्हारे भाइयों के पैर लड़खड़ा रहे हैं । तुम्हारी वाणी मे पहले जैसा तीखापन नही है । कौन परीक्षा लेगा ? समझो सुसीम ! सागर की एक बूंद सागर के जल के समान ही है, किन्तु उसमें प्रलय का संघात उत्पन्न नही हो सकता । यदि तुम्हारे साथ के भाइयों ने मगध का भविष्य नही पहचाना तो मुझे बलपूर्वक पहचानने के लिए बाध्य करना होगा ।

सुसीम : हमें कोई बाध्य नही कर सकता ।

सुगाम : राजकुमारों को कोई बाध्य नही कर सकता । काल भी

उनके सामने आये, तो वे उसे अपने पैरों से कुचल देंगे। भाइयो! अशोक तुम्हारे सामने है! उस पर आक्रमण करो! वध करो।

[कुमारों में एक-दूसरे का मुख देखकर फिर आक्रमण करने की हलचल होती है।]

अशोक : (तीव्रता से) शान्त! तुम लोग एक पग भी आगे नहीं बढ़ सकते। यह रण-भूमि नहीं है। यह पाटलिपुत्र की पवित्र धरणी है। गंगा और सोन ने इसका अभिषेक किया है। युद्ध करना है तो पाटलिपुत्र के बाहर की भूमि रक्त से रंजित की जायेगी, यह पवित्र धरणी यज्ञ-भूमि है, रण-भूमि नहीं।

सुसीम : किन्तु तुम! अशोक तुम! इसे अपने दुस्साहस से रण-भूमि में परिणत करना चाहते हो।

अशोक : आक्रमण करने का आदेश किसने दिया? मैंने या तुमने! यह भी तक्षशिला का विद्रोह है। यह भी उत्तर-चक्र का विप्लव है? यह पाटलिपुत्र के भविष्य का निर्णय है। यह हमारी पितृ-भूमि—हमारे मध्य-चक्र की परम्परा का निर्णय है। सुसीम! अधिकार को विद्रोह का खिलौना मत बनाओ। मैं आवेश के चक्रव्यूह में अधिकार को लांछित नहीं होने दूंगा। मैं जानता हूँ, आवेश में भरे हुए व्यक्तियों का समूह पशुओं के पैरों से चलता है। आवेश दूर हो।

सुगाम : तो सुसीम मगध के सम्राट् होंगे। पिता का उत्तराधिकार उन्हीं को प्राप्त होगा।

अशोक : और तुम्हें प्राप्त क्यों नहीं हो सकता? तुम भी मगध सम्राट् के पुत्र हो, पिता के उत्तराधिकारी हो! सुगाम! तुम भी मगध के सम्राट् हो सकते हो!

सुगाम : वह तुमने स्वीकार कब किया?

अशोक : वह भी कभी स्वीकार हो सकता है। किन्तु इसके लिए तुम विद्रोह करोगे? किसके साथ विद्रोह करोगे? अमात्य-

मण्डल की शक्ति प्रजा की शक्ति है। प्रजा की शक्ति ईश्वर की शक्ति है। ईश्वर की शक्ति से कौन युद्ध करेगा? याद रखो, सुगाम! प्रजा की शक्ति मेरे साथ है, फिर किसमें साहस है कि ईश्वर की शक्ति के समक्ष खड़ा रह सके? और, इन टूटी हुई तलवारों के साथ तुम मुझसे युद्ध करोगे? सुगाम! तुमने इन कुमारों के हाथों में टूट जानेवाली तलवारें क्यों दे रखी हैं?

[कुमार अपनी तलवारों पर दृष्टि डालते हैं।]

सुगाम : ये राजकुमारों की अपनी तलवारें हैं।

अशोक : तो इन तलवारों का पानी उतर गया है। जब विद्रोह के लिए तलवार उठती है तो उसका पानी उतर जाता है (तलवारों को लक्ष्य कर) यह देखो! ये तलवारें आपस में ही टकरा रही हैं। सुहास! और सुबेल! तुम लोगों की तलवारें आपस में ही टकराकर कुण्ठित हो रही हैं! पीछे हटो।

[दोनों यन्त्रवत् पीछे हट जाते हैं।]

सुदत्त : मेरी तलवार तो नहीं टकरा रही है।

अशोक : तुम भविष्य को पहचानते हो। सुदत्त! और सुगाम! तुम भी भविष्य को पहचानते हो। क्योंकि तुम मुझे सावधान करने आये थे और अपने लिये मगध का सिंहासन···

सुसीम : (आश्चर्य से सुगाम की ओर देखते हुए) अपने लिये मगध का सिंहासन चाहते थे।

सुगाम : अपने लिये अर्थात् तुम्हारे लिये।

सुदत्त : मुझसे तो किसी अमात्य-पद की बात कर रहे थे।

सुहास : हाँ, और यही मुझसे भी कहा था।

सुबेल : और मुझे तो अमात्य के नाम से पुकारने भी लगे थे!

अशोक : शान्त! शान्त! परस्पर भेद की बातें करने से लाभ

कुछ नही होगा। परस्पर अविश्वास का समय कहाँ ? पाटलिपुत्र का प्रत्येक राजकुमार सत्य को पहचानता है, वह धोखे में नहीं आ सकता। मैं तुम सबसे अपने मन की बातें कहना चाहता था, किन्तु पूज्य पिता की चिता की जलती हुई भस्म आज भी पाटलिपुत्र को दग्ध कर रही है ! पूज्य माताओं की आँखों से बही हुई आँसुओं की धारा इस सोन नदी के प्रवाह से किसी भी प्रकार कम नही।

सुदत्त : मैंने भी यही कहा था, अशोक ! ···मैंने भी यही कहा था।

सुसीम : (दृढ़ता से) मेरे सामने यह प्रश्न नही है, अशोक ! मैं अपना अधिकार चाहता हूँ, अधिकार चाहता हूँ ! मैं ज्येष्ठ हूँ।

अशोक : फिर मेरे प्रणाम के अधिकारी होकर मेरे आक्रमण के अधिकारी क्यों होना चाहते थे ? सुसीम ! तुम नही जानते हो कि तुम कितने महान् हो ! तुममें कितनी शक्ति और क्षमता है ! तुमने तक्षशिला का विद्रोह एक दिन में समाप्त कर दिया ! तुम सम्राट् बिन्दुसार के ज्येष्ठ पुत्र ! मगध साम्राज्य के सुदृढ स्तम्भ ! यदि तुम अपने विवेक को सन्तुलित रखते तो यह राज्यश्री तुम्हारे चरणों में लोटती और तुम पदाघात करते हुए कहते—"दूर हो पिशाची ! तू मेरी शरण में आने के योग्य नहीं है।" किन्तु आज पिता का मरण तुम्हारे राज्य-वैभव का सोपान बन रहा है ? माताओं की अश्रु-धारा में तुम अपने भाई की रक्त-धारा मिलाना चाहते हो ?

सुदत्त : मैंने तुमसे यही कहा था, सुगाम ! मैंने भी यही कहा था, अशोक ! मैं निश्चय तुम्हारे पक्ष में हूँ। मेरा प्रणाम स्वीकार करो।

[प्रणाम करके अशोक के समीप आकर खड़ा हो जाता है।]

सुबेल : और मैंने भी अशोक का विरोध कब किया ! मैं भी तुम्हारे पक्ष मे हूँ, प्रणाम करता हूँ। (प्रणाम करता है और अशोक के समीप दूसरी ओर खड़ा हो जाता है।)

सुहास : अशोक सत्य के पथ पर है। मैं भी प्रणाम करता हूँ।

[प्रणाम करके अशोक के पक्ष में आकर सुदत्त के समीप खड़ा हो जाता है।]

अशोक : पाटलिपुत्र की राजनीति कृतज्ञता का स्वर पहचानती है। मैं तुम सब लोगों का कृतज्ञ हूँ। सुदत्त ! सुबेल ! और सुहास ! तुम लोग विविध शासन-चक्रों के कुमार बनने की योग्यता रखते हो। तुम लोग जाओ। माताओं को तुम्हारे शीतल शब्दों की आवश्यकता होगी।

सुदत्त : मैं भी यही सोचता हूँ, अशोक ! (सुबेल और सुहास से) चलो सुबेल ! चलो सुहास ! (सुसीम से) अच्छा सुसीम ! हम लोग जा रहे हैं।

सुबेल और सुहास : चलो ! (अशोक को प्रणाम करके जाते हैं।)

सुसीम : (अशोक से) तो इस प्रकार तुमने भेद-नीति से काम लिया ?

अशोक : (शान्ति से) भेद-नीति का प्रयोग वहाँ हो, जहाँ संगठन हो और जहाँ लोगो को भ्रम मे डालकर काम लिया जा सकता हो। इस नीति की आवश्यकता मुझे नही है सुसीम ! मेरी नीति तो आत्मविश्वास की है। आत्म-विश्वास जीवन के सत्य को पहचानने का बीज-मन्त्र है और जीवन का सत्य किसी एक व्यक्ति का धन नही है, वह मानव-मात्र का अखण्ड वैभव है। तुम उदार नही हो सके ! उदारता के अभाव मे तुम्हारा वैभव शरद्कालीन बादल बन गया, जो देखने मे तो उज्ज्वल है, किन्तु उसमे जल की एक बूँद भी नहीं है। तुम नहीं

समझ सके कि तुम्हारी आँखों की परिधि ही अन्तिम परिधि नहीं है···क्षितिज के पार भी एक परिधि है, जिसमें पृथ्वी और आकाश जैसे अलग तत्त्वों में भी सन्धि हो सकती है।

सुगाम : अशोक ! तुम महान् हो।

अशोक : महान् तो मानव है, सुगाम ! यदि कोई व्यक्ति सच्चा मानव बन सके ! मानव ही सृष्टि का केन्द्र है। जहाँ वह है, वहाँ सारी प्रकृति है···मानव ही राष्ट्र है। और मानव ही युग है। वह अनन्त प्रगति है, उसमे अनन्त शक्ति का स्रोत है यद्यपि वह नही जानता कि इस शक्ति का स्रोत कहाँ है।

सुसीम : (सिर पकड़कर) ओह ! सब समाप्त हो गया !

सुगाम : मेरे लिये कही कोई स्थान नहीं रह गया !

[अमात्य खल्लाहक का प्रवेश।]

खल्लाहक : सम्राट् की जय !

अशोक : (मुस्कराकर) अमात्य ! तुम और अंगरक्षक गुप्त स्थान मे बैठे-बैठे थक गये होंगे, किन्तु मुझे अपनी वाणी और दृष्टि पर विश्वास था।

खल्लाहक : सम्राट् ! सैनिक गुल्म भी समीप ही था। वह प्रतीक्षा में था कि कुमार आक्रमण करें।

अशोक : किन्तु कुमारों ने आक्रमण नही किया। कितने कृपालु हैं ये कुमार !

सुसीम : इस समय जाता हूँ अशोक ! फिर कभी···

अशोक : नही ! अभी तुम नही जा सकोगे, कुमार सुसीम और सुगाम ! मेरा अनुरोध है कि तुम आत्महत्या नहीं करोगे। इस वंश में किसी ने आत्महत्या नही की है। तुमसे शासन-चक्र के सम्बन्ध मे कुछ परामर्श करूँगा। यह स्मरण रखना कि आवश्यकता से अधिक बुद्धिमत्ता मूर्खता की जननी है।

सुसीम . क्या मुझे खौलते हुए तेल के कड़ाहे मे डालोगे ? मुझे कोई चिन्ता नही !

अशोक . (अमात्य से) मैं अग्ररक्षक की उपस्थिति चाहता हूँ।

खल्लाहक . सम्राट् की जैसी इच्छा। मैं भी यही चाहता था।

[प्रस्थान।]

अशोक : कुमार सुसीम ! राज्यश्री एक महापर्व मनाती है। उसमे महत्त्वाकाक्षा की भरी नदी मे स्नान होता है। गुप्त अभिसन्धियो का मन्त्र-पाठ होता है। प्रशस्तियों के स्तोत्र पढ़े जाते और ऐश्वर्य के पुष्प बिखेरे जाते हैं। पाटलिपुत्र की राज्यश्री मे यह कुछ नही होगा। उसमे प्राचीन राजपुरुषो की अर्चना मे केवल प्रेम की पुष्पांजलि अर्पित होगी और प्राणो के दीप जलेंगे। यही राजनीति है···यही राज्यश्री है।

(नेपथ्य में देखकर) कौन ? चंडगिरिक ?

चंडगिरिक : आज्ञा, सम्राट् ! (सिर झुकाता है।)

अशोक : राजकुमार सुसीम और राजकुमार सुगाम को आदर सहित राजमहलों मे पहुँचा दो !

सुसीम : हम लोग जिस भाँति आये है, उसी भाँति चले जायेंगे।

अशोक . नही, कुमार सुसीम ! सम्राट् बिन्दुसार के राजवंश की मर्यादा सुरक्षित रहेगी।

(चडगिरिक से) और चंडगिरिक ! साथ मे सैनिक गुल्म भी रहेगा।

चंडगिरिक : जैसी आज्ञा, सम्राट् ! (कुमारों से) कुमारों से प्रार्थना है कि वे राजमहलो की ओर प्रस्थान करें।

सुसीम : (सुगाम से) चलो सुगाम !

सुगाम : अशोक ! तुम्हारे कहने से मैं आत्महत्या नही करूँगा।

अशोक . साधु, सुगाम !

[सुसीम और सुगाम का शीघ्रता से प्रस्थान; खल्लाहक का प्रवेश।]

खल्लाहक : सम्राट् की कोई विशेष आज्ञा ?

अशोक : (सोचते हुए) कृष्णपक्ष की रात्रि में जितने अधिक तारे रहते हैं, उतना ही अधिक अन्धकार भी रहता है।

खल्लाहक : सत्य है, सम्राट् ! किन्तु आज चन्द्रोदय होने पर पाटलिपुत्र का सच्चा सम्राट् मिला !

अशोक : यह उस पवित्र सोन (नेपथ्य में संकेत करते हुए) का वरदान है। सोन का, जिसने सम्राट् चन्द्रगुप्त के पाटलिपुत्र का निर्माण किया। उसी पवित्र सोन का वरदान है।

[*अशोक के मुखमण्डल से तेज की किरणें फूटती-सी ज्ञात होती हैं।*]

[धीरे-धीरे परदा गिरता है।]

अभिषेक पर्व

पात्र-परिचय

(प्रवेशानुसार)

सामन्तराव झालोर : महाराणा प्रताप का सामन्त

सुरजनसिंह : कुम्भलगढ़ का दुर्गरक्षक

जगमल : महाराणा प्रताप के भाई

चन्दावत : महाराणा प्रताप का सामन्त

सगर : महाराणा प्रताप के भाई

महाराणा प्रताप : मेवाड़ के महाराणा

जैतसिंह : बिदनौर का राठौर

रायसिंह : महाराणा प्रताप के भाई

सालुम्बरा नरेश : महाराणा प्रताप के सहायक

रामसिह तम्बर : " "

भील सरदार : " "

दूत आदि

अभिषेक पर्व

समय : सूर्योदय के पूर्व   स्थान : कुम्भलगढ   काल : १५७२ ई०

[स्थिति—कुम्भलगढ का दुर्ग सुनसान वनभूमि में किसी उन्मत्त सिंह की भांति तनकर अपनी शक्ति तोल रहा है। यह उषाकाल की वेला में अलसाया हुआ-सा सुनसान वन-प्रान्त को बोझिल बना रहा है। दुर्ग के टिमटिमाते हुए दीपक उसकी आंखों की भांति झपकते हुए दृष्टिगत हो रहे हैं।

दूर पर घण्टे और घड़ियाल की ध्वनि सुनायी पड़ रही है। कुछ ही क्षण बाद शंखनाद होता है जो निस्तब्ध नीरवता में एक लकीर-सा खींचता हुआ शून्य में विलीन हो जाता है। बीच-बीच में कोई पक्षी चीख उठता है।

एक ओर से गम्भीरता की चाल से एक सामन्त का प्रवेश। प्रात.काल के धुंधलेपन में उसकी वेश-भूषा अस्पष्ट-सी दीख

पड़ती है। फिर भी सिर पर उठी हुई पगड़ी, शरीर पर अंगरखा और पंजामे की रूपरेखा लक्षित होती है। कमर में तलवार। वह गहराई से दायें-बायें देखता है। फिर सामने दृढ़तापूर्वक खड़े होकर अधिकारपूर्ण सधे स्वर में पुकारता है—]

सामन्त : दुर्ग पर कौन है?

(नीरवता में स्वर गूंज उठता है। कुछ क्षणों बाद वह फिर पुकारता है) दुर्ग पर कौन है?

(भीतर से कड़ा स्वर) सावधान!

सामन्त : मैं सामन्त राव झालोर हूँ। दुर्गरक्षक!

दुर्गरक्षक : (प्रवेश कर) घणी खमा, अन्नदाता!

सामन्त : सिंह-द्वार पर कोई नहीं है?

दुर्गरक्षक : दस सामन्त और एक हजार सैनिक है। मैं सुरजनसिंह हूँ। भगवान् एकलिंग की आरती हो रही थी। सब प्रणाम करने गये है। मैं सिंह-द्वार से ही प्रणाम कर रहा था। कुछ देर हुई। पधारिए।

सामन्त : सालुम्बरा-नरेश और सामन्त चन्दावत कृष्ण पधारे?

दुर्गरक्षक : दूत ने सूचना दी थी कि सूर्योदय होने पर महाराज और सामन्त पधारेंगे। अभी तो सूर्योदय नहीं हुआ, आते ही होंगे।

सामन्त : बहुत आवश्यक कार्य है। ग्वालियर-नरेश महाराज रामचन्द्र तम्बर की ओर से कुछ सूचना मिली?

दुर्गरक्षक : वे भी आ रहे है, राव राजा!

सामन्त : वे अनेक सामन्तो से मिल रहे है। उन्हें आने में शायद कुछ विलम्ब हो।

दुर्गरक्षक : तो आप भीतर पधारिए, राव राजा!

सामन्त : नहीं, मैं बाहर ही सालुम्बरा-नरेश और सामन्त

चन्दावत कृष्ण की प्रतीक्षा करूँगा। तुम भीतर के गुप्त मार्ग से भील सरदार को सूचना दो कि वे भी आकर हम लोगों से मिलें।

दुर्गरक्षक : जैसी आज्ञा, अन्नदाता! (प्रस्थान)

सामन्त : (टहलते हुए) परिस्थिति···बड़ी ही···भयानक है। भगवान् एकलिंग ही रक्षा करें!···एकलिंग! तुम्ही मेवाड़ के रक्षक हो!···तुम्हारी जय हो!

[बाहर से एक भारी शिला के लुढ़कने का शब्द; तलवार लिये हुए जगमल का प्रवेश।]

जगमल : (आते ही) भगवान् एकलिंग की नहीं, मेरी जय बोलो।

सामन्त : (शीघ्रता मे मुड़कर) कौन? (घूरकर देखता हुआ) कुमार जगमल···

जगमल : *कुमार जगमल नहीं, महाराणा जगमल···*

(अट्टहास करता है। एक-एक शब्द पर ज़ोर देकर बोलता है।) म···हा···रा···णा···ज···ग···म···ल···!

सामन्त : महाराणा उदयसिंह के रहते तुम कैसे महाराणा बन सकते हो?

जगमल : क्यों? क्यों नही बन सकता? मैं महाराणा का पुत्र हूँ, *उनका उत्तराधिकारी हूँ।*

सामन्त : उत्तराधिकारी तो प्रतापसिंह को होना चाहिए।

जगमल : प्रतापसिंह को? (हँसकर) ओः···तुम प्रतापसिंह के मामा हो। इसीलिए प्रतापसिंह को होना चाहिए।

सामन्त : नहीं। इसलिए कि प्रतापसिंह महाराणा उदयसिंह के सबसे ज्येष्ठ पुत्र हैं। और मेवाड़ राज्य में उत्तराधिकार ज्येष्ठ पुत्र को ही मिलता है। तुम तो महाराणा के छोटे पुत्र हो।

जगमल : बड़े-छोटे का प्रश्न नहीं है, सामन्त ! यह महाराणा की इच्छा का प्रश्न है । महाराणा की इच्छा है कि मैं उनका उत्तराधिकारी बनूं, मैं मेवाड़ का महाराणा बनूं । (तनकर खड़े होते हुए) 'मेवाड़ के महाराणा श्री जगमलसिंह !' यही बात सुनाने के लिए तुम्हें खोजता हुआ आया हूँ ।

सामन्त . कुमार जगमल ! तुम महाराणा की इच्छा से भले ही आत्म-प्रशंसा करो, किन्तु महाराणा की इच्छा मेवाड को मान्य नही होगी। कुमार जगमल ! मेवाड़ महाराणा के ज्येष्ठ पुत्र को ही उत्तराधिकारी मानता आया है, और इस दृष्टि से मेवाड़ के उत्तराधिकारी होंगे कुमार प्रतापसिंह !

जगमल . तुम विद्रोही हो, सामन्त ! तुम महाराणा की इच्छा के विरुद्ध बोल रहे हो ।

सामन्त : मैं मेवाड की परम्परा की बात कह रहा हूँ ।

जगमल : परम्परा से महाराणा महान् है ।

सामन्त : नहीं, परम्परा से ही महाराणा को पद प्राप्त होता है ।

जगमल : नहीं, सामन्त ! परम्परा का मोह बदला जा सकता है, महाराणा नहीं बदला जा सकता। और तुम्हारा यह व्यवहार महाराणा के प्रति विद्रोह है। तुम्हें इसका दण्ड दिया जायेगा । तुम्हारी जीभ काट दी जायेगी ।

सामन्त : कुमार जगमल ! जीभ काटनेवाले के हाथ पहले काट दिये जायेंगे । विद्रोह के क्षणों में जीभें भी तलवारें बन जाती हैं और उनके सामने फौलाद की तलवार भी कुण्ठित हो जाती है ।

जगमल : तो तुम्हारी जीभ विद्रोह की तलवार है ?

सामन्त : विद्रोह की तलवार तो तुम लिये हो, जगमल !

महाराणा उदयसिंह के जीवित रहते तुम अपने को महाराणा कहते फिरते हो ?

जगमल : महाराणा का जीवन तो समाप्तप्राय है। वे अपनी मृत्यु की अन्तिम घड़ियाँ गिन रहे हैं।

सामन्त : अन्तिम घड़ियाँ गिन रहे हैं ? ऐसे समय तो तुम्हें उनकी शैया के समीप रहना चाहिए, कुमार जगमल !

जगमल : उसके लिए मेरी माँ पर्याप्त है। उनकी आँखों में यथेष्ट आँसुओं के सागर हैं। पिता को मेरे आँसुओं की आवश्यकता नहीं है। फिर मुझे साहस का संचय भी करना है।

सामन्त : साहस का संचय ?

जगमल : हाँ, साहस का संचय। राज्याधिकार करुणा के आँसुओं से नहीं लिखे जाते। वे लिखे जाते हैं—आग की चिनगारियों से। पिता की मृत्यु तो राज्याधिकार का स्वर्ण-सोपान है जिसका निर्माण कुछ ही क्षणों में हो जायेगा।

सामन्त : तुम्हें लज्जा आनी चाहिए, कुमार जगमल ! कि तुम अपने पिता की मृत्यु में राज्याधिकार का सुख देखते हो।

जगमल : प्रत्येक उत्तराधिकारी को देखना चाहिए। राज्याधिकार गर्व और गौरव की वस्तु है, विशेषकर जब मेरे पिता ने इस बात की घोषणा कर दी है। तुमने वह घोषणा नहीं सुनी।

सामन्त : उस घोषणा में केवल कण्ठ है, वह भी किसी दूसरे का कण्ठ है। हृदय नहीं है।

जगमल : तात्पर्य ? (कठोर दृष्टि)

सामन्त : तात्पर्य यह कि वह घोषणा महाराणा ने नहीं की, जिनसे करायी गयी है ?

जगमल : किसने करायी है ?

सामन्त : तुम्हारी माँ ने जिन्होने महाराणा पर अधिकार कर रखा है।

जगमल : (चीखकर) सामन्त ! तुम अपनी सीमा से बाहर जा रहे हो।

सामन्त : कठोर सत्य को क्रोध से नहीं छिपाया जा सकता। फिर से सुन लो, कुमार जगमल ! महाराणा की घोषणा में तुम्हारी माँ का कण्ठ-स्वर है।

जगमल : (तलवार निकालकर) सावधान !

सामन्त : तलवार तौलने की शक्ति है तुममें ? (तलवार निकाल लेता है।)

जगमल : विद्रोही ! दुस्साहसी ! सम्हल...

[जगमल तलवार से प्रहार करता है। सामन्त झालौर उसे तलवार पर झेल-कर भरपूर हाथ से वार करता है। दो क्षण द्वन्द्व होता है। सामन्त के कठोर प्रहार से कुमार जगमल के हाथ की तलवार छूटकर दूर जा गिरती है।]

जगमल : (भय से चीखकर) रुको, सामन्त !

सामन्त : (रुककर) मैं स्वयं शस्त्रहीन पर प्रहार नहीं करूँगा। तलवार उठाओ, कुमार जगमल !

[कुमार जगमल नीचा सिर किये हुए तलवार उठाता है।]

सामन्त : प्रहार करो !

जगमल : नहीं। युद्ध करने की आवश्यकता नहीं है। मैं तुम्हें क्षमा करता हूँ। (तलवार म्यान में रखते हुए) प्रहार कर, मैं तुम्हें मारना नहीं चाहता था। मैं तो तुम्हारी शक्ति की परीक्षा लेना चाहता था।

सामन्त : (मुस्कराकर) परीक्षा ? ले ली परीक्षा ?

जगमल : हाँ, अच्छी तलवार चलाते हो। तलवार चलाने की ऐसी कला कम वीरों में पायी जाती है। यह कला तो बड़े भाग्य से आती है। तुम्हें मेरा अंग-रक्षक होना चाहिए। इसलिए एक बात कहना चाहता हूँ। समझ लो कि तुम पर प्रसन्न होकर एक उपहार देना चाहता हूँ। और…और वह उपहार यह है कि…तुम नये महाराणा (अपनी ओर संकेत करते हुए) जगमलसिंह के…प्रमुख हाँ, प्रमुख…प्रमुख नहीं, सर्वप्रमुख सामन्त बनोगे ? मैं तुम्हें अभी से प्रमुख सामन्त घोषित करता हूँ। तुम देवगढ़ जागीर के अधिकारी होगे। उसमें १२५ ग्राम हैं और उनकी वार्षिक आय है अस्सी हज़ार !

सामन्त : कुमार जगमल ! उपहार देने के व्यर्थ अभिमान में मत भूलो ! जाकर अपने पिता के अन्तिम समय में उन्हें शान्ति दो और उनकी सेवा करो।

जगमल : मैं तुम्हारा उपदेश सुनने नहीं आया, भालौर ! अपने अभिमान मे तुम इतने बड़े उपहार का मूल्य नहीं समझे ! तुम्हारे इस अभिमान का उत्तर मैं तुम्हें संग्राम-भूमि मे दूंगा। यहाँ एकान्त में तुमसे युद्ध कर अपनी शक्ति का अनुचित प्रयोग क्या करूँ। अभी तुम्हें छोड़ता हूँ। अपने साथी-सामन्तों को एकत्र कर संग्राम-भूमि में मिलना, इस समय जाता हूँ।

[वेग से प्रस्थान।]

सामन्त : (कुछ देर तक कुमार जगमल के जाने की दिशा में देखता है) कायर कुमार ! अपने…झूठे अभिमान में अपने को महाराणा घोषित करते फिरते हैं… उधर महाराणा उदयसिंह अपने जीवन की अन्तिम घड़ियाँ…गिन रहे हैं। कुमार प्रतापसिंह ! तुम्हारा भाग्य…तुम्हारा भाग्य अहंकारियों का क्रीड़ा-कन्दुक

बना हुआ है ! प्रताप···कुमार प्रतापसिंह···

[बाहर दौड़ते हुए घोड़े के टापों की ध्वनि आती है। शीघ्रता से सामन्त चन्दावत का प्रवेश।]

चन्दावत : सामन्त झालौर ! तुम यहाँ आ गये ?

झालौर : सूर्योदय के पहले से मैं तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा हूँ। सालुम्बरा-नरेश नही पधारे ?

चन्दावत : वे सामन्तों से बातें करते हैं। वे यहाँ कुछ विलम्ब से पहुँचेंगे; तुम्हे सूचना देने के लिए ही उन्होने मुझे पहले भेज दिया। कुमार जगमल यहाँ आये थे ?

झालौर . महाराणा बनकर आये थे। सामन्त चन्दावत !

चन्दावत . महाराणा बनकर ?

झालौर : मेवाड के महान् महाराणा।

चन्दावत : जब मैं इस ओर आ रहा था तब वे अपने घोड़े को तेज दौडाते हुए भागे जा रहे थे। मुझे देखकर उन्होंने अपने घोड़े को और तेज दौड़ा दिया।

झालौर : आपके सामने अपने को महाराणा घोषित नहीं किया ?

चन्दावत : देखने से बहुत भयभीत मालूम देते थे।

झालौर · यहाँ उन्होंने साहसी बनने का प्रयत्न किया था।

चन्दावत : नही बन सके ?

झालौर . मैंने जब उन्हे 'कुमार जगमल' नाम से पुकारा तो तन-कर खडे हो गये और बोले—'कुमार जगमल' नही, 'महाराणा जगमल' कहो (एक-एक शब्द पर जोर देते हुए) 'म···हा···रा···णा···ज···ग···म···ल···!' महाराणा उदयसिंह के पुत्र···उनके उत्तरा-धिकारी···

चन्दावत : मैं यह जानता हूँ कि महाराणा ने कुमार जगमल

को उत्तराधिकारी घोषित किया, कुमार प्रताप को नहीं। किन्तु महाराणा उदयसिंह तो अभी जीवित हैं।

झालौर : वे भयानक रूप से अस्वस्थ हैं। सामन्त चन्दावत !

चन्दावत : भयानक रूप से ?

झालौर : हाँ, यह बात राजमहल से छिपायी जा रही है, किन्तु कुमार जगमल अपने उत्तराधिकार के अभिमान में सब लोगों से उनकी भयानक अस्वस्थता की बात करते फिरते हैं। और सामन्त चन्दावत ! महाराणा स्वस्थ ही कब रहे ? बयालीस वर्ष की अवस्था तक बीस विवाह, पच्चीस पुत्र और बीस पुत्रियाँ !

चन्दावत : कितना अच्छा होता कि बयालीस वर्ष की अवस्था तक वे बीस युद्ध करते, पच्चीस दुर्ग जीतते और बीस राज्यों से मेवाड़ की सीमा बढ़ाते !

झालौर : आज तक इतने विलासी महाराणा मेवाड़ के सिंहासन पर नहीं बैठे। बेचारी पन्ना धाय क्या जानती थी कि अपने पुत्र को बनवीर की तलवार से कटवाकर वह जिस मेवाड के उत्तराधिकारी की रक्षा कर रही है, वह मेवाड की स्वतन्त्रता के लिए युद्ध नहीं करेगा, बीस रानियों को लेकर रंगमहल मे हास-परिहास करेगा !

चन्दावत : और सामन्त झालौर ! उसके पास इतना विवेक भी नहीं रहेगा कि वह अपने ज्येष्ठ पुत्र कुमार प्रतापसिंह का उत्तराधिकार छीनकर अपने छोटे निर्बल पुत्र कुमार जगमल को सौप देगा !

झालौर : और वह जगमल, जो अपने पिता की अस्वस्थता में उनकी सेवा न कर अपने को महाराणा घोषित करता फिरेगा और अट्टहास करते हुए अपने पिता के अन्तिम क्षणों की बात कहेगा।

चन्दावत : अन्तिम क्षणों की ?

झालोर : हाँ, हाँ, अन्तिम क्षणों की। अभी कुमार जगमल कह रहे थे कि महाराणा अपने जीवन की अन्तिम घड़ियाँ गिन रहे हैं। कुमार जगमल तो चाहते हैं कि महाराणा का देहान्त शीघ्र ही हो जाये जिससे वे मेवाड़ के महाराणा बन सकें।

चन्दावत : मेवाड का महाराणा-पद प्राप्त करना उनके लिए ऐसा सरल नही है।

झालोर : किन्तु वे तो अपने अभिमान मे इसे सरल समझते हैं। कहते थे कि यही सुनाने के लिए तुम्हे खोजता हुआ आया हूँ क्योकि तुम कुमार प्रतापसिह के मामा हो! प्रतापसिह नही···मैं मेवाड का महाराणा हूँ। मैंने उनकी बात का विरोध किया तो उन्होंने मुझ पर तलवार चलायी।

चन्दावत : अच्छा, बात यहाँ तक बढी ?

झालोर : हाँ, और जब द्वन्द्व-युद्ध में उनकी तलवार हाथों से छूट गयी तो मुझे अपने पक्ष मे करने के लिए उन्होने मुझे देवगढ की जागीर देने का प्रलोभन दिया। जब इसमें भी उन्हे सफलता नही मिली तो वे रण-क्षेत्र का निमन्त्रण देकर चले गये।

चन्दावत : यह मेवाड का दुर्भाग्य है, सामन्त ! मैं नही जानता था कि वह उच्छृङ्खल कुमार अपने अभियान का डंका अपने पिता की मृत्यु के पूर्व ही पीटना आरम्भ कर देगा ! महाराणा के उत्तराधिकार की घोषणा ने जैसे उसके अभिमान में पंख लगा दिये हैं। वह सब दिशाओ मे उड रहा है और अपने पंखों की दूषित वायु से सारे मेवाड को अपमानित कर रहा है ! तुम उसके पंख नही काट सकते ?

झालोर : अभी ही काट देता, सामन्त चन्दावत ! किन्तु वे अपनी तलवार उठाकर भाग गये !

चन्दावत : (सोचते हुए) महाराणा की घोषणा में परिवर्तन नहीं हो सकता ?

झालौर : सम्भव नही है, सामन्त ! महाराणा उदयसिंह अपनी भाटी रानी से बड़ा प्रेम रखते हैं। यह भाटी रानी कुमार जगमल की माँ हैं, उन्होने महाराणा को विवश कर दिया है, वे राज्य का उत्तराधिकार ज्येष्ठ पुत्र कुमार प्रतापसिंह को न देकर कुमार जगमल को दें। महाराणा की घोषणा मे पुरुष-कण्ठ नही है, नारी-कण्ठ है।

चन्दावत : भाटी रानी ने कैकेयी का आदर्श अपने सामने रखा है कि ज्येष्ठ पुत्र राम को उत्तराधिकार न देकर ये भरत को दिया जाये !

झालौर : सत्य है, सामन्त ! किन्तु अन्तर यह है कि भरत भ्रातृ-भक्त थे, कुमार जगमल भ्रातृ-द्रोही हैं। अपने बड़े भाई कुमार प्रतापसिंह से वे घृणा करते हैं।

चन्दावत : घृणा करते हैं, यह तो मैं जानता हूँ, किन्तु मेरा विश्वास है कि मेवाड़ का गौरव कुमार प्रतापसिंह के हाथों ही रक्षित रहेगा, कुमार जगमल के हाथों नहीं।

झालौर : इसके लिए हमे प्रयत्न करना होगा।

चन्दावत : हम सब इसके लिए प्रयत्न करेंगे। महाराज सालुम्बरा तो पिछली रातभर सामन्तो से मिलते रहे। सभी सामन्त महाराणा उदयसिंह की घोषणा से अप्रसन्न है। वे कुमार प्रतापसिंह का पक्ष लेकर विद्रोह करने के लिए तैयार हैं।

झालौर : यह समय विद्रोह का नही है, चन्दावत ! दिल्ली का बादशाह अकबर यही तो चाहता है कि मेवाड़ मे विद्रोह हो और वह शाही फौज भेजकर मेवाड़ पर शाही झण्डा फहरा दे। वह समझता है कि मेवाड़ की स्वतन्त्रता भी राजा भगवानदास की बहन है

जिसके साथ वह विवाह कर सकता है। वह यह
नही समझ सकता कि मेवाड़ की राज्य-लक्ष्मी
बिजली की भयानक अग्नि-रेखा है जो तड़पेगी तो
बादशाह के साथ दिल्ली का सिंहासन भी ध्वस्त कर
देगी…सम्पूर्ण रूप से ध्वस्त कर देगी।

[दूत का प्रवेश।]

दूत : **(हाथ जोडकर)** घणी खमा, अन्नदाता! एक घुड़सवार यह सूचना दे गया कि महाराणा उदयसिंहजी इस संसार मे नही रहे।

झालौर, चन्दावत : **(एक साथ चौंककर)** नही रहे?

दूत : यह भी कहा है, अन्नदाता! कि कुछ सरदारो ने महाराणाजी की मृत्यु-शय्या पर ही कुमार जगमल को महाराणा बना दिया है!

चन्दावत : भयानक दुर्घटना! अच्छा…**(सोचते हुए)** तुम… जाओ।

दूत : जो आज्ञा! **(प्रस्थान)**

चन्दावत : **(गहरी सांस लेकर)** तो…महाराणा उदयसिंह की मृत्यु और कुमार जगमल का राज्याभिषेक! दोनों ही कार्य एक साथ हो गये!

झालौर : मेवाड़ के इतिहास में ये दोनो ही पृष्ठ कलंकित रहेगे।

चन्दावत : बप्पारावल, महाराणा सांगा और महाराणा कुम्भा ने जिस मेवाड के मस्तक पर मुकुट रखा, उसी पर कलंक का टीका लगाने का कार्य महाराणा उदयसिंह ने किया। अब महाराणा जगमल उस कलंक के टीके को कलंक-रेखा बनाने का कार्य करेंगे।

झालौर : इस कलंक-रेखा को केवल महाराणा प्रतापसिंह ही मिटा सकते हैं।

चन्दावत : ठीक कहते हो। चलो, भीतर चलकर अन्य सामन्तों

के साथ मिलकर भविष्य के कार्यक्रम पर गम्भीरता से विचार किया जाये।

भालोर : चलो। मैं गुप्त मार्ग से अन्य सामन्तों को भी बुला लूंगा।

[दोनों भीतर चले जाते हैं। कुछ क्षणों तक शान्ति रहती है। फिर शान से साथ महाराणा जगमल और उनके छोटे भाई कुमार सगरसिंह आते हैं। कुमार सगरसिंह चारों ओर सावधानी से देख-कर आगे बढ़ते हैं।]

जगमल : दोनो सामन्त भाग गये, कुमार सगरसिंह ! मैं जानता हूँ कि दोनों कितने कायर हैं। हम लोगों को तो पिता की मृत्यु होनेभर की प्रतीक्षा थी। अब पिता की घोषणा के अनुसार मैं महाराणा हूँ। (गर्व से चारों ओर देखते हैं) एँ···और जब मैं महाराणा हूँ तो अब ये साधारण सामन्त (दुर्ग के भीतर संकेत करते हुए) किस बल पर मेरा सामना कर सकते हैं ? तलवार बाँधते हैं, किन्तु धार तलवार पर नहीं है, उनकी जीभ पर ही है ! कायर ! कलंकी ! अब तो मैं हूँ और मेरा आतंक है जो मेवाड़ के कण-कण पर छाया हुआ है···महाराणा का आतंक !

सगर : यह तो होगा ही; महाराणा जगमल ! यह तो होगा ही, जब मैं तुम्हारे साथ हूँ। अब कौन सामन्त हमारे और तुम्हारे सामने खड़ा हो सकता है ?

जगमल : हमारे पिताजी थे। वे सामन्तों पर शासन करना नहीं जानते थे। बात करते थे और हँस देते थे। कहीं हँस देने से शासन चलता है ? देखो, इस तरह चलना चाहिए। (शान से चलते हैं।) इस तरह भौंहों पर बल आना चाहिए। (भौंहें सिकोड़ते हैं।)

इस तरह मुख कुछ तिरछा रखना चाहिए (मुख टेढ़ा करते हैं।) इस तरह बोलना चाहिए—(शान से बोलते हैं।) सामन्त ! आज मेरी महारानी की दाहिनी आँख क्यों फड़क···क्यों फड़क रही है ?

सगर : धन्य हो ! महाराणा ! आपकी प्रत्येक बात में महाराणापन टपक रहा है। मैंने अपनी पत्नी से पूछा था कि कुमार जगमल के महाराणा होने पर उनकी क्या सम्मति है। उन्होंने कहा···उन्होंने कहा···(सोचते हुए) क्या कहा था ?···कहा था कि···कुछ स्मरण नहीं आता।

जगमल : कोई बात नहीं। कही हुई बात तो बीत जाती है। जैसे···जैसे···लड़ा हुआ युद्ध भी समाप्त हो जाता है। आगे सन्धि की बात चलती है। शक्ति को संगठित करने के लिए महाराणा को सन्धि की बात चलानी पड़ती है।

सगर : क्यों नहीं, सन्धि की बात चलानी पड़ेगी। अगर युद्ध न हो तो सन्धि कैसी ? और अगर सन्धि न हो तो···तो युद्ध कैसा ? दोनों साथ चलते हैं जैसे···जैसे···पुरुष और स्त्री···पुरुष युद्ध और स्त्री सन्धि ! ठीक है न ?

जगमल : बिलकुल ठीक ! लेकिन कभी उलटा भी हो जाता है, स्त्री युद्ध बन जाती है और पुरुष सन्धि। हमारे पिताजी ने सन्धि का अच्छा उदाहरण रखा है।

सगर : इस सम्बन्ध में भी मैंने अपनी स्त्री से पूछा था, उसने कहा था कि पुरुष को सदैव ही सन्धि करनी चाहिए।

जगमल : तुम्हारी पत्नी बहुत समझदार है। मैं भी सन्धि को उतना ही महत्त्व देता हूँ जितना सन्धि को !··· नहीं···नहीं···जितना युद्ध को और युद्ध में भी मैं

क्रान्ति-दूत शास्त्री

क्रान्ति-दूत शास्त्री

(रेडियो रूपक)

ध्वनि : [नेपथ्य में गंगा के बहने की ध्वनि। मल्लाह एक नौका लेकर आ रहा है। नदी के प्रवाह में पतवारों की 'छप-छप' ध्वनि उठ रही है। मल्लाह का गाना दूर से उभरता है] :

जुगुति बताये जाव, कवन विधि रहबो राम।
जो तुहु साम बहुत दिन बितिहैं—रे
अपनी सुरतिया रे, अपनी सुरतिया रे
मोरे बहियाँ पै लिखाये जाव !
ए...ए...ए...
अपनी सुरतिया मोरे बहियाँ पै

[एक बालक आवाज देता है।]

बालक १ : ए नाववाले ! नाव किनारे लगाओ।

मल्लाह : (दूर से) अपनी सुरतिया मोरे बहियाँ पै...

बालक १ : अरे ओ सुरतियावाले ! नाव इधर लाओ।

मल्लाह : (दूर से) ला रहा हूँ, भैया !

बालक १ : (दूसरे बालक से) तुम क्यों चुपचाप बैठे हो ? तुम भी तो उस पार जाओगे ।

बालक : (जो लालबहादुर है ।) जाऊँगा जरूर । लेकिन आज मैंने अपने बाल कटवा लिये हैं ।

बालक १ : बाल कटवा लिये है ।(हँस पड़ता है ।) दरअसल तुमने तो बाल बिल्कुल कटवा लिये। लेकिन क्या बाल कटवाकर नाव पर बैठना मना है ?

ला०ब० : मना करनेवाला कौन है ? लेकिन हाँ, अगर आज बाल न कटवाता तो नाव पर बैठ लेता।

बालक १ : बाल न कटवाता तो नाव पर बैठ लेता ? तुम भी अजीब लड़के हो ? (हँसने लगता है ।)

ध्वनि : (एक दूसरा बालक पिपहरी बजाता हुआ आता है ।)

बालक १ : यह क्या बजा रहे हो ?

बालक २ : पिपहरी ! देखो कैसी बजती है ! पी···पी··· तुम भी बजाओ न ? (लालबहादुर को देखकर) अरे ! तुम हो लालबहादुर ! तुम तो पहचाने भी नहीं जाते ! तुम्हारे इतने बड़े-बड़े बाल क्या हुए ? क्या इस उमर में ही संन्यासी बन गये ? (दोनों लड़के हँसते हैं ।)सन्यासी···सं···न्या··· सी···!

ला०ब० : संन्यासी बनना बहुत मुश्किल है रामनाथ ! सिर्फ बाल कटवाने से कोई सन्यासी नहीं बनता ।

रामनाथ : तो फिर बाल क्यों कटवा डाले ?

ला०ब० : यह जानकर क्या करोगे ?

रामनाथ : करना कुछ नहीं है, सिर्फ यह जानना है कि इतना खूबसूरत लड़का बदसूरत कैसे हो गया !

ला०ब० : खूबसूरती और बदसूरती बालों के कटने से नहीं होती, दिल के अच्छे और बुरे होने से होती है ।

रामनाथ : अरे वाह ! लालबहादुर, तू तो अभी से मास्टरजी हो गया !

ला०ब० : मास्टरजी नही हो गया। जो सही बात है, वही कहनी चाहिए।

रामनाथ : तो बालों के कटने मे कौन सही बात है ?

ला०ब० : सही बात यह है कि बाल बड़े होगे तो उनमे तेल डालना होगा, कंघी से उन्हे सँवारना होगा, अपना पैसा और समय बरबाद करना होगा। छोटे बाल रखोगे तो पैसा भी बचेगा और समय भी।

बालक १ : और बदसूरत दिखेंगे, उसका कौन जिम्मेदार होगा !

ला०ब० : पढनेवाले लड़कों को खूबसूरती और बदसूरती की क्या चिन्ता ? क्या तुम्हारी परीक्षा मे खूबसूरती पर सवाल पूछा जायेगा ?

रामनाथ : अरे बाप रे ! लालबहादुर तो शास्त्रार्थ करने लगा। अभी से शास्त्री बन गया।

बालक १ : चलो, मुझे तो शास्त्री नहीं बनना ! मुझे पिपहरी दो, थोड़ी देर मैं बजाऊँगा। (बजाता है।)

रामनाथ : तुम भी बजाओ, लालबहादुर।

बालक १ : वह पिपहरी क्या बजायेगा, वह तो शास्त्री बनके शंख बजायेगा।

रामनाथ : खैर आगे चलकर शंख बजाना, या बिगुल। अभी यह पिपहरी बजाओ। मैं दूकानदार की आँखो में धूल झोंककर ले आया हूँ।

ला०ब० : तुम दूकानदार को धोखा देकर यह लाये हो।

रामनाथ : और दूकानदार कितना धोखा देता है ? एक पैसे की चीज़ चार पैसे मे देता है।

ला०ब० : लेकिन अगर कोई धोखा देता है तो क्या तुम भी उसकी नकल करोगे ? कोई चोरी करता है तो तुम भी चोरी करोगे ?

रामनाथ : पिपहरी की चोरी कोई चोरी नही है। यह तो बजाने की चीज़ है, दूकान में रखने की नही। देखो मैं कैसी अच्छी पिपहरी बजाता हूँ। पी (बजाता है।). तुम भी बजाओगे ?

ला०ब० : मैं चोरी की चीज छुऊँगा भी नही।

बालक १ . अरे, वाह रे साहूकार !

ध्वनि : (नाव आती है, नाववालों का हल्का-सा शोर होता है।)

नाववाला : ओ बचवा हन ! तुमहू पार उतरवँ।

बालक १ : अरे, इतनी देर से तो तुम्हें बुला रहे हैं। जायेंगे उस पार।

रामनाथ : हम भी चलेंगे। तुम भी चलो लालबहादुर !

ला०ब० : मैं नही जाऊँगा। मेरे पास उतराई देने के लिए पैसे नही है।

नाववाला · अरे, तो यक्कै पैसा तो लागत बा।

ला०ब० : मेरे पास एक पैसा भी नही है। बाल कटवाये हैं तो नाई ने मेरे चारो पैसे ले लिये। अब एक पैसा कहाँ से लाऊँ !

नाववाला : चलो तो इस जून तुमका ऐसने उतार देवँ।

कुछ लोग : हाँ-हाँ, आ जाओ। अरे एक पैसा हम दे देंगे।

ला०ब० : मैं मुफ्त मे पार नही उतरना चाहता। किसी का दान भी नही चाहता।

रामनाथ : (व्यंग्य से) अरे वाह रे लालबहादुर ! इसके घर-वालों,ने इसका नाम लालबहादुर क्या रख दिया, सब बातों में अपने को लालबहादुर समझता है।

ला०ब० : देखो, घरवालो का नाम लिया तो अच्छा नहीं होगा। मैं जो ठीक समझता हूँ, वह करता हूँ।

रामनाथ : हाँ, हाँ, वही करो, वही करो, राजा बेटा ! बिना पैसे के नाव नही चढ़ोगे, किसी का दान नही लोगे,

तुम तो जादू के ज़ोर से उस पार जाओगे !

लाο बο : जादू के ज़ोर से नहीं, अपनी ताकत से जाऊँगा ।

रामनाथ : अच्छा तो आप इतनी चौड़ी गंगाजी तैरकर पार करेंगे ?

लाοबο : कोशिश कर सकता हूँ ।

रामनाथ : कोशिश कीजिए और अगर आप डूब जायें तो पाप हम लोगों को लगे । (हँसता है ।)

लाοबο : डूबने लगूँगा तो तुम्हे पुकारूँगा नही, रामनाथ ! और तुम्हारी नाव से पहले मैं उस पार पहुँचूँगा ।

नाववाला : अरे नाही बचवा ! ऐसन जिद ना करो ।

एक व्यक्ति : अरे आ जाओ बच्चे ! ऐसी ज़िद नही करते ।

लाοबο : यह ज़िद नहीं है । यह मेरी प्रेरणा-शक्ति है । यह रहा मेरे सिर पर मेरा बस्ता और मैं चला उस पार !

ध्वनि : (नदी में कूदने की आवाज़)

दूसरा व्यक्ति : नाववाले ! नाव पास ही रखना । लड़का अगर डूबने लगे तो उसे बचा लेंगे ।

लाοबο : (कुछ दूरी से) आप चिन्ता न करें । मुझे तैरना अच्छी तरह मालूम है ।

स्त्री-कण्ठ : मैं लालबहादुर की प्रेरणा-शक्ति हूँ । किसी प्रकार की कठिनाई उपस्थित होने पर लालबहादुर ने जिस कौशल से मेरा प्रयोग किया है, मैं धन्य हो गयी हूँ । मुझे अपने हृदय में संचित करके ही लालबहादुर ने गंगा का विशाल विस्तार पार किया । वे जब गंगा पार कर भीगे कपड़े पहने अपनी माँ के पास पहुँचे तो माँ ने कहा—

माँ का स्वर : नन्हे ! तू अभी तक कहाँ रहा ! अरे ! तेरे सारे कपड़े भीगे हैं ? और···और···

लाοबο : माँ ! घबराने की बात नही है । बातों ही बातों में

कुछ लड़कों ने छेड़ दिया तो गंगाजी में कूद पड़ा और तैरकर पार कर आया। मैंने तो…

मां का स्वर : (बीच ही में) और तेरे सिर के बाल क्या हुए नन्हे! क्या वे भी किसी के कहने से…?

ला०ब० : नहीं मां! वे मैंने अपने मन से कटवा डाले।

मां का स्वर : कटवा डाले? अरे, तूने तो सिर ही मुंड़वा लिया है, नन्हे! मैं तो अभी जीती हूँ। यह मुण्डन क्यों कराया?

ला०ब० : मां, मुण्डन कहां है? मैंने तो बालों को छोटा ही कराया है। मेरा नाम नन्हे है तो मेरे बाल भी नन्हे हो गये हैं। मेरे सिर को छूकर देखो। मुण्डन कहाँ कराया है!

मां का स्वर : लेकिन तुझे इतने छोटे बाल कराने की क्या सूझी?

ला०ब० : यह न पूछो मां!

मां का स्वर : क्यों? किसी साधू के फेर में तो नहीं पड़ गया?

ला०ब० : नहीं मां! मैं साधू के फेर में क्या पड़ूंगा?

मां का स्वर : अरे, बनारस में साधू-संयासियों की कमी है?

ला०ब० : कमी तो नहीं है मां, लेकिन साधू बनने के लिए भी तो समझ की जरूरत होती है। मैंने बाल इसलिए छोटे करा लिये कि तुम्हें इसकी चिन्ता न हो।

मां का स्वर : चिन्ता न हो? क्या मतलब?

ला०ब० : मतलब यह कि मैं बाल बड़े-बड़े रखूंगा तो तुम्हे तेल और कंघी जुटानी पड़ेगी। मेरे बाल इतने घने हैं कि दो-तीन बार में ही कंघी बालों में उलझकर टूट जाती है। पैसों के बिना यह सब कहां से होगा?

मां का स्वर : (भरे गले से) नन्हे!

ला०ब० : पिछले इतवार को नानाजी ने दो पैसे दिये थे, और कल मामाजी ने भी दो पैसे दिये। चार पैसों में नाई से कहकर बाल छोटे करा लिये।

माँ का स्वर : तो तूने अपने नाश्ते के पैसे नाई को दे दिये ?

ला०ब० : माँ, तुम मुझे इतना खिला देती हो कि नाश्ते की जरूरत ही नहीं पड़ती। बाल रोज-रोज तो कटवाने नही पड़ते ! अब महीने-भर के लिए फुर्सत है। अब जो पैसे मिलेंगे…

माँ का स्वर : दो ही पैसे तो मिलेंगे। हाय ! नन्हे…मैं तुझे… (गला भर आता है।)

ला०ब० : माँ, आज मल्लाह बहुत अच्छा गाना गा रहा था—
जुगुति बताये जाव, कवन विधि रहबों राम।
[गुनगुनाता है।]

प्रेरणा का स्वर : इस आत्म-विश्वास और साहस के चक्रों पर लालबहादुर का जीवन-रथ आगे बढ़ता गया। बनारस के हरिश्चन्द्र हाईस्कूल मे जब वे अध्ययन कर रहे थे, तभी महात्मा गांधी का असहयोग-आन्दोलन पूरे वेग से सारे देश में लहराने लगा। लालबहादुर के विचार जीवन की संकटमय परिस्थितियों से क्रान्तिकारी हो गये थे। मैं भी लालबहादुर के हृदय में देश की सेवा के लिए मचल रही थी। महात्मा गांधी की घोषणा थी कि अंग्रेजों ने हमें गुलाम बना रखा है। हम स्वतन्त्र होंगे। हम सत्याग्रह करेंगे—हम असहयोग करेंगे। हमारे वकील अदालत मे जाना छोड़ दें, हमारे बच्चे स्कूल और कालेजो से बाहर निकल आयें। हमारे देश की गरीबी दूर करना पहला काम है। देश की सेवा में हमे सब-कुछ बलिदान कर देना चाहिए। लालबहादुर भी जनता की सेवा करने की बात सोचते थे। वे स्कूल छोड़ना चाहते थे। मैं सदैव उन्हें स्कूल छोड़ने का आग्रह करती, किन्तु तभी विवेक का स्वर मन में गूंजता—

विवेक का स्वर : तुम स्कूल तो छोड़ दोगे लेकिन तुम्हारी माँ का क्या

होगा ? उनकी सारी आशाएँ तुम्ही पर तो हैं। और अभी तुम्हारी उम्र ही क्या है ? यह अवस्था तो पढाई की अवस्था है ! देश-सेवा के लिए तो सारा जीवन पड़ा है। अधूरी पढ़ाई से तुम देश की असली हालत समझने के योग्य भी हो सकोगे ? देश की सेवा···देश की सेवा तो प्रत्येक देशवासी को करनी चाहिए, लेकिन नन्हे ! तुम ? तुम तो अभी नन्हे हो। कुछ बड़े हो जाओ, फिर देश की सेवा करना। अभी पढो। यह पढ़ने की—ज्ञान प्राप्त करने की उम्र है। तुम्हें असहयोग-आन्दोलन में भाग लेने की आवश्यकता नहीं है। तुम्हारी माँ···तुम्हारी माँ तुम्हारे बिना···

प्रेरणा का स्वर : और तभी मैं कहती—माँ ने सदैव अच्छी बातें ही सिखलायी हैं। वे तो प्रसन्न होगी कि उनका पुत्र देश की सेवा में पीछे नहीं है। शिवाजी और गांधीजी की माँ ने उन्हें देश की सेवा में आत्म-बलिदान करने की शिक्षा ही दी थी। क्रान्ति के लिए अवस्था की कोई कैद नहीं है। गुरु गोविन्दसिंह के बच्चों ने अपनी कच्ची उम्र मे ही देश-सेवा में अपना बलिदान कर दिया था। और तभी वाराणसी में एक जुलूस निकला—

ध्वनि : (जुलूस की आवाज़। बहुत हलचल हो रही है।)

एक स्वर : महात्मा गांधी की

समवेत स्वर : जय !

स्वर : भारत माता की

समवेत स्वर : जय !

स्वर : अंग्रेज़ी राज का

समवेत स्वर : नाश हो !

स्वर : अपना देश

समवेत स्वर : आज़ाद हो !

स्वर : अदालत जाना

समवेत स्वर : छोड़ दो !

स्वर : स्कूल-कालेज

समवेत स्वर : छोड़ दो !

स्वर : गुलामी शिक्षा

समवेत स्वर : छोड़ दो !

स्वर : स्कूल-कालेज

समवेत स्वर : छोड़ दो !

स्वर : भारत माता की

समवेत स्वर : जय !

प्रेरणा का स्वर : और तभी लालबहादुर ने जुलूस का नेतृत्व करते हुए भाषण दिया—

(लालबहादुर का कुछ प्रौढ़ स्वर) भाइयो और बहनो ! आज महात्मा गांधी ने जो असहयोग-आन्दोलन का संग्राम छेड़ा है, जानते हो कि क्यों है ? हमारे देश के करोड़ों देश-भाइयों की हालत दर्दनाक है। वे लोग गुलामी में पिस रहे हैं। गरीबी उनकी हड्डियों को चूस रही है। वे कोई तरक्की नहीं कर सकते। अंग्रेज यहाँ राज करते हैं। सारे देश से रुपया बटोरकर अपने देश इंग्लैण्ड भेज देते हैं। किसान की खेती लगान देने में ही खतम हो जाती है, मजदूर से भी बदतर है। हम ऐसी हालत नहीं रहने देंगे। लोकमान्य तिलक ने कहा है कि स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। वह अधिकार हम लेंगे। चाहे हमे कितना ही कष्ट झेलना पड़े। हिन्दू और मुसलमान, सिख और पारसी सब भाई-भाई हैं। हम सब एक हैं। इस अंग्रेजी राज्य की हम धज्जियाँ उड़ा देंगे। हम जानते हैं कि पुलिस—हमारे ही देश-भाइयों की पुलिस हमें जेल में बन्द कर देगी, लेकिन हमें इसकी चिन्ता नहीं है। पुलिस के सिपाही

हमारी सभा को तितर-बितर करने आ रहे हैं। वे भले ही हमें यहाँ से हटा दें, हमारी देश पर मर-मिटने की प्रतिज्ञा को नहीं हटा सकते।

प्रेरणा का स्वर : और लालबहादुर जेल में डाल दिये गये।

जेल वार्डर का स्वर : होशियार···होशियार···होशियार !

ध्वनि : (स्वर प्रतिध्वनित होता है।)

(घण्टी बजती है।)

वार्डर : जितने कैदी हैं वे सब बैरेक के अन्दर चले जायें।

ध्वनि : (जाने की हलचल होती है।)

वार्डर : लालबहादुरजी ! आप भी अपनी कोठरी में चले जायें।

ला०ब० : अगर मैं न जाऊँ तो मुझे क्या सज़ा मिलेगी ?

वार्डर : यह बड़े साहब जानते हैं। मैं तो सिर्फ रिपोर्ट कर सकता हूँ।

ला०ब० : तो आप रिपोर्ट कर दीजिए कि मैं अन्दर नहीं जाना चाहता !

वार्डर : अगर साहब ने कारण पूछा तो मैं क्या कहूँगा ?

ला०ब० : कह दीजिए कि कैदियों को जो खाना दिया जाता है, उसमे दाल नहीं है, कंकड़ों का शोरबा है। मैं उस शोरबे के कंकड बीनना चाहता हूँ।

वार्डर : कंकड़ ?

ला०ब० : जी हाँ, कंकड़। कंकड़ों के बीनने की मेरी आदत है। मैंने अपने खेल के मैदान के भी कंकड़ बीने हैं। यहाँ भी वैसा ही काम करना चाहता हूँ।

वार्डर : तो मैं साहब से यही कह दूँ ?

ला०ब० : हाँ, और यह भी कह दीजिए कि जब तक राजनीतिक कैदियों को अच्छा खाना नहीं मिलेगा तब तक मैं खाना नहीं खाऊँगा। अगर ज़बर्दस्ती की गयी और जेल में आग भड़की तो मैं उसका ज़िम्मेदार नहीं।

वार्डर : अच्छा, साहब से यही कह दूँगा।

[सन्तरी का प्रवेश।]

सन्तरी : लालबहादुरजी! साहब ने पाँच मिनट का समय दिया है। आपकी माँ आपसे मिलना चाहती है।

माँ : (विह्वल स्वर में) नन्हे!

ला०ब० : (तरल स्वर से) माँ!

माँ : नन्हे! तू कितना दुबला हो गया है, खाना नही खाता क्या?

ला०ब० : माँ, कहाँ तुम्हारे हाथ का खाना और कहाँ जेल का खाना!

माँ : तो मैं तेरे लिए खाना लायी हूँ। अपने हाथ से बना के।

ला०ब० : कितना खाना लायी हो! देखूं? (देखकर) बस? इस जेल में मेरे दो सौ साथी हैं। किस-किसको दूँगा? यह खाना वापस ले जाओ माँ!

माँ : वापस ले जाऊँ?

ला०ब० : हाँ, तकलीफ सहने की आदत है, वह आदत क्यों छुड़ाना चाहती हो? बिना तकलीफ उठाये अपना देश कैसे आज़ाद होगा?

माँ : नन्हे! तेरे बिना मुझे कुछ अच्छा नही लगता, लेकिन देश को उठाने के लिए तू जेल में है तो मैं अपना भाग्य समझती हूँ। इतनी छोटी उम्र में तूने अपना कर्तव्य पहचान लिया और तकलीफ में भी खुश है तो मैं भी खुश हूँ।

ला०ब० : माँ, बस आशीर्वाद देती रहना।

माँ : बेटे, मैं तो अपने रोम-रोम से आशीर्वाद देती हूँ। तेरे पिताजी भी (गला भर आता है।) स्वर्ग से तुझे आशीर्वाद देते होगे। वे तेरी तपस्या देखकर कितने खुश होते होंगे? तेरे पिता! (सिसकी)

ला०ब० : माँ ! तुमने जो साहस और शक्ति मुझे दी है, वह दिनों-दिन बढ़ रही है। कल का कष्ट आज की असुविधा है, और आज की असुविधा कल का सुख हो जायेगा।

माँ : तुझे कोई तकलीफ तो नहीं है, बेटा ?

ला०ब० : तकलीफ ? पूछो कितना सुख है ! दो सौ साथियों के बीच तकलीफ भी प्रसन्नता बन जाती है। जो चीज यहाँ आती है, वह दो सौ साथियों में बँट जाती है। तुम्ही सोचो, अगर एक छोटी-सी तकलीफ के दो सौ टुकड़े किये जायें तो तकलीफ भी कितनी रह जायेगी ? बिल्कुल मज़ाक की चीज।

माँ : तो बेटे, जल्दी लौटना।

ला०ब० . माँ, प्रार्थना करो कि देश जल्दी स्वतन्त्र हो जाये !

सन्तरी : माताजी ! समय हो गया, चलिए।

माँ : अच्छा नन्हे ! तुझे खुश देखकर मैं बहुत खुश हूँ। जाती हूँ। ला ! अपना सिर ! उस पर अपना हाथ रख दूँ।

प्रेरणा का स्वर : और अपनी माँ का आशीर्वाद पाकर लालबहादुर मुस्तैदी के साथ जेल में रहे। जेल से छूटने पर उन्होंने काशी विद्यापीठ में प्रवेश किया और वे शास्त्री की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण हुए। इस समय से लालबहादुर के साथ शास्त्री की उपाधि जुड़ गयी और वे ससार में लालबहादुर शास्त्री के नाम से प्रसिद्ध हुए। जनता-जनार्दन की सेवा के हेतु वे 'लोक सेवा मण्डल' के आजीवन सदस्य बने और श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन के साथ कार्य करने के लिए वे वाराणसी से प्रयाग चले आये। इसी बीच एक दिन उनकी माँ ने उनसे कहा—

माँ : नन्हे !

ला०ब० : क्या है माँ ?

मां : तू अपनी मां को कितना चाहता है ?

ला०ब० : यह भी कोई पूछने की बात है ?

मां : पूछने की बात इसलिए है कि कहीं तू मेरे मन की बात न काट दे।

ला०ब० : कभी कोई तुम्हारी बात मैंने काटी है, मां ?

मां : तो यह बात भी मत काटना। कहूँ ?

ला०ब० : हां, कहो न ?

मां : तो कहती हूँ नन्हे। मुझे तेरे लिए एक नन्ही बहू चाहिए।

ला०ब० : (हँसकर) क्या तुम मेरी सेवाओं से सन्तुष्ट नहीं हो ?

मां : सन्तुष्ट होने की बात नहीं है, नन्हे ! मैं अकेली रहती हूँ। एक साथी मिल जायेगा। तू तो देशसेवा में जेल चला जाता है।

ला०ब० : तो अपने साथ उसे भी दुखी करोगी।

मां : यह नहीं, मेरा दुख वह बाँट लेगी और मेरा दुख कुछ उसके हिस्से में आ जायेगा। तू तो जेल में कहता था कि साथियों के बीच दुख बँट जाता है।

ला०ब० : अच्छा तो मेरी बात से मुझे ही चुप करना चाहती हो ?

मां : तू चुप रह, जा नन्हे, मैं सब कर लूंगी।

ला०ब० : मैं तुम्हें कुछ नहीं करने दूंगा, मां !

मां : तो तूने मेरी बात काट दी न ?

ला०ब० : इसे बात काटना नहीं कहते मां ! देश-सेवा करने-वालों को शादी नहीं करनी चाहिए। देश-सेवा स्त्री-सेवा में बदल जाती है।

मां : तू स्त्री की सेवा क्यों करेगा ? तू देश की सेवा कर, स्त्री तेरी सेवा करे।

ला०ब० : मैं किसी से सेवा नहीं चाहता। अपना सब काम

अपने हाथों से करता हूँ। घर में झाड़ू लगा लेता हूँ, खाने के बर्तन साफ कर लेता हूँ, अपने कपड़ों में साबुन लगा लेता हूँ।

माँ : तू ये सब काम करेगा तो देश की सेवा के लिए समय कहाँ से निकालेगा ? बस, देख ली तेरी देशसेवा।

ला०ब० : सो तो तुम मेरे छुटपन से देखती आ रही हो!

माँ : तेरा छुटपन तो देख लिया, अब जब तक जिन्दा हूँ, कुछ और देख लूँ!

ला०ब० : तुम बहुत दिनों तक जिन्दा रहोगी माँ। शायद मेरे बाद भी तुम्हें जीना पड़े।

माँ : चुप रह नन्हे! कैसी बात मुँह से निकालता है! इसीलिए तू शास्त्री हुआ है ? मैं तुझसे कभी कोई बात नहीं कहूँगी।

ला०ब० : माँ! बुरा मान गयीं ? माफ कर दो।

माँ : माफ तो तभी करूँगी जब मेरी बात पूरी होगी। सुन, मैंने तेरे ननिहाल में एक बहुत अच्छी लड़की देखी है। आहा! बिल्कुल तेरे स्वभाव की। बड़ी सुन्दर और बड़ी सुशील।

ला०ब० : अच्छा, तुमने लड़की भी देख ली ?

माँ : उसका नाम है ललिता।

ला०ब० : नाम भी जान लिया ?

माँ : मैंने सब बातें पक्की कर ली हैं।

ला०ब० : तो मेरी भी एक बात पक्की समझ लो कि मैं न तो शादी में किसी प्रकार का दहेज लूँगा और न किसी तरह का दिखावा या तमाशा होने दूँगा। सीदा-सादा जैसा मैं हूँ, वैसी ही सीधी-सादी शादी होगी।

माँ : अच्छा मैंने मान लिया, मुझे तो अपनी बहू ललिता चाहिए।

प्रेरणा का स्वर : और श्री लालबहादुर शास्त्री का विवाह ललिता

त्यागपत्र दिया। नेहरूजी इससे पूर्ण आश्वस्त नहीं थे, इसलिए उन्होंने अपने गिरते हुए स्वास्थ्य के कारण पुनः शास्त्रीजी को मन्त्रिमण्डल में सम्मिलित किया।

२७ मई सन् १९६४ भारत का दुर्भाग्यपूर्ण दिन था जब देश के नायक और जनता के प्राण पं० जवाहरलाल नेहरू का स्वर्गवास हुआ। सारे देश में शोक और निराशा का अन्धकार छा गया। नेहरू के बाद कौन? यह प्रश्न विश्व के कोने-कोने से टकराने लगा। उस समय सारे देश में प्रकाश की एक ही किरण थी—वह किरण थी लालबहादुर शास्त्री की राजनीतिक योग्यता, और ९ जून १९६४ को शास्त्रीजी प्रधानमन्त्री निर्वाचित हुए।

शास्त्रीजी ने अपनी ईमानदारी, कर्मठता और देश-प्रेम का ऐसा उदाहरण दिया कि सारा देश शास्त्रीजी के प्रति श्रद्धा से विनत हो गया। शास्त्रीजी ने अपनी ओर से कहा—

(शास्त्रीजी का स्वर—कट १)

सभापति जी, बहनो और भाइयो!

आपके बीच यहाँ आकर मुझे स्वभावतः बड़ी प्रसन्नता होती है, और मैं यह जानता हूँ कि आपको इस बात का अन्दाज़ा है कि मुझ पर एक बड़ा बोझा और एक बड़ी ज़िम्मेदारी आपने डाली है। इस देश को चलाना, इस देश के कामों को आगे बढ़ाना कोई सरल और आसान बात नहीं। काफी दिक्कतें और कठिनाइयाँ हमारे सामने हैं; लेकिन हम उनसे दूर भागें, या उनसे बचने की कोशिश करें; तो फिर यह हमारी कायरता होगी और हम अपनी ज़िम्मेदारी को, जो एक आज़ाद देश के रहनेवाले नागरिक को पूरा करना चाहिए, वह उसे पूरा नहीं करेगा। तो मैं, जो भी बोझा, जो भी ज़िम्मेदारी आयी है, उसको साहस से, हिम्मत से उठाना चाहता हूँ। मैंने उसे उठाने की भी इन दिनों कोशिश की है, पिछले कुछ महीनों में और यही आपसे कह सकता हूँ कि मैं सारे जीवन एक कार्यकर्ता, एक काम करनेवाला रहा हूँ। आज भी इस बड़े पद पर आकर मैं उस स्प्रिट, उस भावना को कार्य-

कर्ता के, वर्कर के नाते, उसको हटाना नही चाहता। उसको छोड़ना नही चाहता, उसको भुलाना नही चाहता। उसी हैसियत से एक देश के काम करनेवाले, एक जो परम्परा रही, जिस ढंग से काम करने का मुझे मौका रहा है; मैं चाहता हूँ कि मैं उस स्प्रिट को कायम रखूं, और उसके अनुसार जो भी आये काम, उसको पूरा करूँ। मैं इतना ही और कहूँगा कि जो भी ज़िम्मेदारी है, उसको ईमानदारी से निभाने की कोशिश करूँगा; और अगर यही एक गुण मेरे जीवन में रहे, मैं उसको अपना सकूं, मैं उसके मुताबिक चल सकूं तब मैं समझूँगा कि अपनी परम्परा के अनुसार, जो अपने देश की है, मैं उसके मुताबिक काम कर सकता हूँ, कर सका हूँ; और सचमुच कुछ देश का उससे भला होगा।

प्रेरणा का स्वर : कठिनाई से दस मास बीते होगे कि अप्रैल १९६५ के अन्तिम सप्ताह मे पाकिस्तान ने भारत पर आक्रमण कर दिया। चीन और पाकिस्तान की इस सम्मिलित उग्रता ने शास्त्रीजी की राजनीतिक अन्तर्दृष्टि की बड़ी कठिन परीक्षा ली किन्तु शास्त्रीजी के आत्मविश्वास, धैर्य और साहस ने भारत को रणक्षेत्र में इतनी शक्ति दी कि हमारे सैनिको ने शत्रुओं के दांत खट्टे कर दिये। और जब पाकिस्तान ने काश्मीर पर हमला किया तो श्री लालबहादुर शास्त्री ने कितने विनोद से कहा—

(शास्त्रीजी का स्वर—कट २)

ये आज नही बहुत पहले पण्डित जवाहरलालजी ने कहा था कि काश्मीर पर हमला अगर हो, तो वो हमला हम हिन्दुस्तान पर मानेंगे। काश्मीर का हमला हिन्दुस्तान पर हमला है, और इतना ही नही जैसा हमने कहा कि उन्होंने इण्टरनेशनल बॉर्डर को पार कर एक काश्मीर को लेने की, कब्जा करने की कोशिश की। समझते थे शायद कि हम इस तरह से अपनी फौज की ताकत से काश्मीर पर कब्जा कर लेंगे, ले लेंगे और फिर दुनिया के सामने कहेंगे कि भई, अब तो ये हमारे हाथ में आ गया, अब हिन्दुस्तान को किसी तरह से कुछ इधर-उधर करके मान लेना चाहिए।

ग्रौर उनके दोस्त भी हैं मुल्क, जो कहते हैं कि भई ग्रब क्या, हल करो, ग्रब तो ये कब्जे में पाकिस्तान के ग्राये ही, वो क्या झगड़ा करते हैं, बड़े सुलहपसन्द लोग हैं, शान्ति चाहनेवाले। तो वो भी ये कहते। ग्रब हम क्या ऐसे बे-ग्रक्ल थे, कुछ नासमझ थे कि हम ये कहते कि ग्रच्छा हम तो ग्रब ग्रपने को काश्मीर में ही बाँध के रखेंगे, छम्ब में मुकाबला करेंगे ग्रौर हम उधर जो ग्राये हुए हैं हमलावर उनको भगाने में लगे रहेंगे। तो ग्रगर हम ये फैसला करते तो इसके माने ये थे कि हम ग्रपने देश की ग्राज़ादी के साथ खिलवाड़ करते। हम ग्रपनी ज़मीन के एक-एक इंच से प्यार करते हैं। उसके लिए हमारा प्रेम है, हमारी मुहब्बत है ग्रौर ग्रगर पाकिस्तान का ये इरादा था कि ग्रपनी फौजी ताकत के बल पर वो काश्मीर पर कब्जा कर ले तो हमारे लिए वो चारा नहीं था सिवाय इसके कि हम भी इण्टरनेशनल बॉर्डर पार करते ग्रौर हम भी लाहौर की तरफ रवाना हो जाते। ग्रौर वो फैसला लिया। वो फैसला एक मुश्किल फैसला था, ये मैं मानता हूँ; लेकिन सारी बातों को देखने के बाद ग्रौर इतना ही नहीं कि पाकिस्तान काश्मीर पर ग्रकेले हमला कर रहा था। उसने राजस्थान पर हमला किया। उसने गुजरात में एक बन्दरगाह पर, एक पोर्ट पर हमला किया। उसने ग्रमृतसर के हवाई ग्रड्डे, बाघा के पास—वहाँ राकेट्स ले ग्राये ग्रौर राकेट्स छोड़े। ये सब इस बात की निशानी थी कि पाकिस्तान एक पूरी तैयारी किये हुए था कि वो हिन्दुस्तान पर हमला करे, काश्मीर ले ग्रौर ग्रगर ज़रूरत पड़े तो ग्रौर भी वो ग्रागे बढ़ जाये। ग्रौर सुना कि ये कहा भी जाता था ग्रौर प्रेसिडेण्ट ग्रयूब ने कहा था, जो बात पहले शायद मैंने कही कि उन्होंने कहा कि हमारे लिए, हम तो हिन्दुस्तान की फौजों के टुकड़े-टुकड़े कर देंगे। "ग्राइ शैल कट इनटू पीसेज़" ये ग्रयूब साहब ने हमारे हिन्दुस्तान की फौजों के लिए कहा था। ग्रौर ये कहा कि हम तो बस ग्रपने सैकड़ों टैंकों को लिये हुए ग्रासानी से दिल्ली की तरफ पहुँच जायेंगे।

अब उनको बड़ा ऐतराज है कि हम लाहौर की तरफ चले गये हैं। कहते हैं बड़ा पुराना शहर है। हमारा सांस्कृतिक, कल्चरल शहर है। हमें उससे इन्कार नहीं; लेकिन हम तो कराची की तरफ नहीं गये। जो उनकी राजधानी है, उधर नहीं पहुँचे। तो एक शहर की तरफ अगर बढ़े तो कौन-सी बड़ी हमने एक नामुनासिब बात की? आखिर किस बात की नाराजगी है ये? लेकिन मैं आपसे कहता हूँ कि ये जो हमने फैसला किया, काफी सोच-समझकर किया। और ये ठीक है कि एक आखिरी जिम्मेदारी मेरी थी। मैं जानता था कि इसमें एक बड़ा खतरा है। मैं ये भी समझता था कि देश को शायद आग से गुजरना पड़े, लेकिन एक ऐसा मौका आ गया था जब हमको ये बात बर्दाश्त नहीं थी। हम इसको सहन नहीं कर सकते थे कि हमको हथियारों के बल पर दबाने की और धमकी देने की कोशिश की जाये। वो हम नहीं बर्दाश्त कर सकते थे, और इसलिए ये फैसला लेना जरूरी था।

प्रेरणा का स्वर : देश की रक्षा के लिए युद्ध में विश्वास करते हुए भी वे 'एटम बम' के निर्माण में विश्वास नहीं रखते थे। इस सम्बन्ध में वे एक बार बोले—

(शास्त्रीजी का स्वर—कट ३)

भारत की अपनी यह विशेषता रही है कि उसने केवल सीमित स्वार्थ की दृष्टि से ही काम नहीं किया है, उसने कुछ अपना लक्ष्य और आदर्श सदा ऊँचा रखा है। अधैर्य और अशान्ति में हम दूर रहे। दूर तक सोचकर काम करने का ढंग हमारा रहा है। हम स्नेह और सहिष्णुता से लोगों से मिलने और उनको मिलाने के पक्षपाती रहे हैं और घबराकर अथवा सशंकित होकर हम जल्दी किसी निर्णय पर पहुँचना ठीक नहीं समझते। देश में आज कई ऐसे प्रश्न हैं जिन पर यदि हम घबराकर निर्णय करेंगे तो अन्त में हमें उससे पछताना पड़ेगा। अणु-बम का ही प्रश्न ले लीजिए। साधारणतः लोग यही कहेंगे कि अणुबम का जवाब अणुबम से ही होना चाहिए। चीन ने एक बम तोड़ा है और शायद वह

दूसरा भी शीघ्र ही तोड़े, लेकिन यदि हमारे सामने कोई बड़ा आदर्श है और मानवता के लिए हमारे हृदय में कोई जगह है तो हमें परेशान होकर एटम बम बनाने की बात नहीं सोचनी होगी। दुनिया में हम केवल भौतिक सुखों के लिए जीवित नहीं हैं। और यदि संसार इसको ही अपना ले तो मानव-मात्र के विकास की क्या सम्भावना रह जाती है! यह ठीक है कि राष्ट्र की सुरक्षा के निमित्त हमें उपाय और साधन निकालने ही होंगे। परन्तु जब तक हमारी भुजाओं में शक्ति है, हमें संसार को दावानल से बचाने का जो भी सम्भव प्रयास है, करना होगा। यह केवल आदर्शवादिता ही नहीं है, व्यावहारिकता की दृष्टि से भी यही हमारे लिए उपयोगी है। यदि भारत आज एटम बम बनाये तो और कितने ही देश उसे बनाने के लिए तैयार हो जायेंगे। फिर तो एटम बम का युद्ध सरल हो जायेगा और हम मानवता और सभ्यता का अन्त होते देखेंगे।

प्रेरणा का स्वर : हमारे देश में जब अन्न-संकट हुआ तो शास्त्रीजी ने हमसे कितनी व्यावहारिक और सूझबूझ की बातें कहीं—

(शास्त्रीजी का स्वर—कट ४)

बाहर से आज हम करोड़ों रुपये का अनाज मँगवाते हैं, गेहूँ और चावल करोड़ों रुपये का आता है, अरबों का मैं कहूँ। और इतना अगर अनाज हम मँगाते रहे और मान लीजिए कोई आज अगर ऐसी हालत हुई कि जिसमें बाहर से अनाज न आये, तो फिर हम और आप क्या करेंगे? तो एक बड़ा देश सारा मुश्किल में पड़ जायेगा। खाना न हो तो लड़ाई भी नहीं लड़ी जा सकती है। इसलिए ये जरूरी बात है, आज बहुत आवश्यक है कि खाना कि किसान अनाज ज्यादा पैदा करे, ज्यादा बेचे और हम और आप जो उसके इस्तेमाल करनेवाले हैं, वह कम-से-कम इस्तेमाल उसका करें। ये भी कहा गया है कि हफ्ते में एक दिन एक समय खाना न खाये। मैंने उसकी कोई सीधी अपील तो नहीं की है, लेकिन लोगों ने खुद उसे उठा लिया है, देश की बहनों ने और लोगों ने उसको

उठा लिया है। हज़ारों फार्म दस्तखत हो गये हैं जिसमे लोगों ने ये निश्चय किया है, फैसला किया है दस्तखत करके कि वो एक समय नहीं खायेंगे, हफ्ते में एक दिन। खैर, मैं तो ये पसन्द करूँगा, अगर यह करना है तो सारे देश में एक दिन नियत हो। एक ही दिन और एक समय, शाम का या जो कुछ कि वह भी एक देश के अन्दर एकता लायेगा। याने ये नही कि कोई मंगल को रखता है, तो कोई इतवार को रखता है, तो कोई बुध को रखता है, खाना एक समय नही खाता। इसके बजाय एक दिन नियत कर लिया जाये कि एक दिन एक समय अब चाहे वह मंगल का दिन रख लें या शनिश्चर का दिन रख लें, कोई शाम के समय न खाये; और वही जो मैंने कहा कि बच्चों को छोडकर, बच्चों का उसमे सवाल नही आता।···हाँ, मैं उस दिन का, अगर कुछ होगा तो मैं उसका ऐलान कर दूंगा। इस समय तो नही कर रहा हूँ, लेकिन कौन-सा दिन हो ? मैं उसको जल्दी फिर अगर होगा तो वह बात मैं फिर कह दूंगा। लेकिन यह मेरा विचार जरूर है कि सारे देश में एक दिन और एक ही समय पर एक वक्त लोग खाना न खायें। फिर देखें हम, मेरा अपना ख्याल है कि एक तरफ किसान अपना काम करें, एक तरफ आप बचत करें और दूसरी तरफ लोग न भी खाकर अपने काम को चला लें, तो हमारा काम देश में चल जाना चाहिए, ऐसा मेरा विश्वास है।

प्रेरणा का स्वर : जिस राजनीतिज्ञ के सामने युद्ध-संकट और अन्न-संकट एक साथ उपस्थित हो जायें, उनके निवारण के लिए वह किस मार्ग का अनुसरण करे ? लालबहादुर शास्त्री ने इस परिस्थिति का सामना जबर्दस्त नारों से किया जो देश के रोम-रोम मे उत्साह की बिजली भर सकते हैं। उन्होंने कहा—

(शास्त्रीजी का स्वर—कट ५)

एक बात और। और वो ये है कि आज किसानो को, जहाँ पर कि आज जवान खून बहा रहे हैं, वहाँ मैं किसानों से ये

निवेदन करना चाहता हूँ कि वो अपनी मेहनत करें पूरी तरह से और अपना पसीना बहायें। क्योंकि आज देश में एक तरफ तो फौजी शक्ति चाहिए और दूसरी तरफ खाने को अनाज चाहिए। पैसे के बारे में मैंने कुछ आपसे कहा। तो आज अनाज आप ज्यादा-से-ज्यादा पैदा करें। कैसे करेंगे? उसमें मैं ज्यादा इस समय जाना नहीं चाहता, न आपको बतलाना चाहता हूँ। लेकिन इतना अगर आप ध्यान मे रखेंगे किसान भाई कि आज देश की रक्षा में अगर आपको मदद करना है तो आपको ज्यादा-से-ज्यादा पैदा करना है और अपने लिए जो जरूरत-भर को आप रखें, बाकी आपको देश को देना चाहिए। तो मैं आशा करता हूँ कि सब किसान भाई इस समय इस काम में मजबूती के साथ लगेंगे कि वो ज्यादा-से-ज्यादा पैदा करें और जितना देश को दे सकें, दें। मैं आपका और समय लेना नही चाहता, चाहता हूँ कि आप इस समय एक ही बात ध्यान में रखें कि आज जो कुछ देश के लिए हमें देना होगा, जो त्याग करना होगा, वो हम और आप करने के लिए तैयार रहेंगे। अपने देश की आजादी की रक्षा पूरी तरह से करेंगे। ये जो स्वराज्य आया है, उसे हम मजबूती से अपने पास रखेंगे ताकि कोई दूसरा हमारी तरफ टेढ़ी नज़र भी उठाकर देखे तो हम उसका पूरी तरह से मुकाबला कर सकें। मैं आपसे कहूँगा कि दो नारे आज लगें। दो नारे अगर आप लगायें, तो वही असली नारा है आज देश की ज़रूरत के मुताबिक। एक तो 'जय जवान' का, और दूसरा 'जय किसान' का। ये दो नारे, मैं समझता हूँ कि आज हमारे देश के लिए ज़रूरी हैं, एक 'जय जवान' और एक 'जय किसान'। और फिर उसीसे सारे देश का एक 'जयहिन्द' का नारा लगता है। तो मैं आपसे ये तीन नारे आपके सामने कहता हूँ। आपसे आशा करूँगा कि आप उसे दुहरायेंगे। एक तो—'जय जवान'! (बोलिए जरा जोर से। क्या धीमी आवाज मे बोलते हैं आप?) 'जय जवान'! 'जय जवान'!! 'जय जवान'!!! 'जय किसान'!

'जय किसान' ! ! 'जय किसान' ! ! ! 'जयहिन्द' ! 'जयहिन्द' ! !
'जयहिन्द' ! ! !

प्रेरणा का स्वर : भारत और पाकिस्तान का झगड़ा मिटाने के लिए रूस के प्रधानमन्त्री कोसीगिन ने भारत के प्रधानमन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खाँ को ताशकन्द आमन्त्रित किया। शास्त्रीजी ने यह निमन्त्रण स्वीकार किया। वे इस सम्बन्ध में देश की परिस्थिति पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं—

(शास्त्रीजी का स्वर—कट ६)

मैं इतना ही कहना चाहूँगा कि इस समय एक देश एक काफी दिक्कतों में, एक काफी कठिनाइयों से गुजरा है। वैसे मैं थोड़े ही दिन पहले आपके बीच में दो महीने पहले आ चुका हूँ और मैंने कुछ आजकल की वर्तमान परिस्थिति पर, आजकल की हालत पर आपके सामने कुछ कहा था। मैं उसको दुहराना नहीं चाहता और न उसमें आपका समय लेना चाहता हूँ। लेकिन इस वक्त भी एक डिप्लोमैटिक फ्रण्ट पर, एक वैसे तो लडाई की, एक लडाई-बन्दी की बात है, मगर आज दुनिया में इस बात की कोशिश है कि हम इस झगडे को खत्म करें। आज सोवियत-यूनियन भी ये चाहता है, यूनाइटेड स्टेट ऑफ अमेरिका भी ये चाहता है, सिक्योरिटी कौन्सिल ने भी एक रेजोल्यूशन, एक प्रस्ताव पास कर रखा है, और ऐसी स्थिति में आज हम पर एक बडा बोझा है, हिन्दुस्तान पर भी है, पाकिस्तान पर भी है। क्योंकि लड़ाई कोई हमेशा तो चलती नहीं। कोई भी लड़ाई हो, छोटी या बड़ी, वो खतम होती है किसी-न-किसी समय और खास तौर पर ऐसा बडा संघर्ष जो कि अभी हुआ है हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के बीच में—ये एक निरन्तर, एक बराबर चलनेवाली चीज नहीं। हमने भी माना है कि हम ताशकन्द जायेंगे और पाकिस्तान ने भी माना है कि वो ताशकन्द में मिलेंगे, बातचीत करेंगे। वैसे मुझे इस बात का थोडा रंज है कि प्रेसीडेंट

ग्रयूब ने जो स्पीच, जो तकरीर यूनाइटेड नेशन्स में की, वो कुछ बहुत मददगार नहीं है। उस स्पीच में, उस तकरीर में उन्होंने ताशकन्द का नाम भी नहीं लिया है और एक सुलह और समझौते की बात के लिए, एक इस बात के लिए कि लड़ाई न हो, बहुत-से कण्डीशस लगाये हैं, बहुत-सी शर्तें लगायी हैं। एक तरह से वो प्रीकण्डीशन है, इस बात का कि हमारी और उनकी लड़ाई बन्द हो। उन्होंने कहा कि सेल्फ-डिटमिनेशन का प्रिंसिपल मान लिया जाये काश्मीर के सम्बन्ध में। उन्होंने ये भी कहा कि और जितने मामले हैं उन मामलों में बातचीत हो, नेगोशियेशन्स हों, कांसीलिएशन हो, ग्रार्बिट्रेशन। इस तरह से एक कई शर्तों को लगाकर उन्होंने लड़ाई के एक बन्द करने की बात कही है। मेरा तो ये कहना है कि पाकिस्तान को इस बात मे क्या ऐतराज है कि हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के बीच में लड़ाई नहीं होगी, वार नहीं होगी। इसको मानने में पाकिस्तान को क्या ऐतराज है? हमारे उनके डिफरेन्सेज, मतभेद, तफर्के रहें। हम उसकी एक बातचीत करें, उसके लिए रास्ता सोचें, मगर एक युद्ध, एक लड़ाई हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के बीच में चले, किसी भी मौके पर, ये हम तो नहीं चाहते और हमने ये बात कही भी है। आज अगर हमारा और पाकिस्तान का ठीक एक रिश्ता-नाता बन सकता है तो इस चीज से बनेगा कि अगर हिन्दुस्तान के लोग समझें कि पाकिस्तान हमला करनेवाला नहीं है और पाकिस्तान के लोग समझें कि भारत या हिन्दुस्तान उन पर हमला करनेवाला नहीं है, उनके जमीन या उनके किसी एरिया को लेनेवाला नहीं है, तो एक वायुमण्डल बनता है, एक नयी फिजा बनती है, एक अच्छा क्लाइमेट बनता है। तो ऐसी सूरत में हमें एक बात जो खास हम चाहते हैं, मगर जिसको कि अयूब साहब ने एक बहुत, एक अपने ढंग से इस बात को काटा है वो एक शक पैदा करता है हमारे दिमाग मे कि आखिर बात क्या होनेवाली है? ठीक है ताशकन्द मे हम मिलेंगे।

प्रेरणा का स्वर—ताशकन्द में शास्त्रीजी ने शान्ति के नाम पर बड़ी सूझ-बूझ का परिचय दिया। १० जनवरी १९६६ के दिन भारत के प्रतिनिधि श्री लालबहादुर शास्त्री और पाकिस्तान के प्रतिनिधि जनाब अयूब खाँ ने ताशकन्द समझौते पर हस्ताक्षर किये। इसके अनुसार दोनों देशों की सेनाएँ ५ अगस्त १९६५ के पूर्व की स्थिति मे चली जानी चाहिए। शास्त्रीजी जितने महान् योद्धा थे, उतने ही महान् शान्ति के उपासक थे। १८ महीनों के कार्यकाल में शास्त्रीजी ने पाकिस्तान के आक्रमणकारी शत्रु को सहयोगी मित्र बना लिया। शास्त्रीजी ने कहा—'अच्छा ही हो गया।' प्रेसीडेण्ट अयूब ने कहा—'हाँ, खुदा अच्छा ही करता है।'

प्रीतिभोज की हलचल हुई। नृत्य और संगीत हुआ (ध्वनि-प्रभाव), प्रीतिभोज में केवल फलों का रस लेकर शास्त्रीजी विश्राम करने के लिए अपने भवन मे आये।

और एक घण्टे के बाद।

शान्तिमय निद्रा मे एक विचित्र बेचैनी—

वातावरण जैसे कस गया—

हवा मे तड़प और घुटन— (ध्वनि-प्रभाव)

भवन जैसे हिल रहा हो—

जोर की खांसी—

हृदय में भयानक टीस—

खांसी—खांसी—खांसी— (ध्वनि-प्रभाव)

डाक्टर—डाक्टर (स्वर धीमा) डाक्टर (स्वर अत्यन्त धीमा)

हलचल—'अरे शास्त्रीजी···अरे शास्त्रीजी···'

शास्त्रीजी के मुख से—हाय राम ! हाय राम ! हाय राम !

और फिर—सब शान्त !

११ जनवरी सन् १९६६ की रात को १ बजकर ३२ मिनट पर हृदय-गति रुकने से शास्त्रीजी का···दे···हा···व···सा···न !

जैसे शास्त्रीजी ने अपने हृदय की सारी गति विश्व-शान्ति के लिए

समर्पित कर दी।

माता रामदुलारी का वात्सल्य और ललिता देवी का सौभाग्य क्रूर काल की कठोर मुट्ठी मे सिमट गया। और वातावरण में शास्त्रीजी का प्रेरणापूर्ण अन्तिम सन्देश गूंज उठा—

अब हमें शान्ति के लिए उसी हिम्मत और हौसले से काम लेना है जिससे हमने हमले का सामना किया था।

मैं शास्त्रीजी की प्रेरणा हूँ। वे जीवनभर क्रान्तिकारी रहे, क्रान्ति-दूत रहे! जीवनभर उनके साथ रही। अब उनके हृदय से निकलकर मैं इस देश के प्रत्येक निवासी—स्त्री और पुरुष के हृदय मे समा रही हूँ जिससे वे अपने देश की संस्कृति, आत्म-निर्भरता और स्वतन्त्रता की रक्षा कर सकें। अब मैं जन-गन-मन में समाकर क्रान्ति-दूत शास्त्रीजी के दिये हुए नारों में ही गूंज रही हूँ—

जय जवान!
जय किसान!
क्रान्तिदूत शास्त्रीजी अमर हों!

(संगीत का निष्क्रमण)

पुरस्कार

पात्र-परिचय

श्यामनारायण : (आयु २८ वर्ष) नाटक का संचालक

नलिनी : (,, १८ वर्ष) राजबहादुर की पत्नी

राजबहादुर : (,, ४८ वर्ष) नलिनी के पति, पुलिस इन्स्पेक्टर

प्रकाश : (,, २२ वर्ष) राजनीति के अपराध में फरार कैदी, नलिनी का प्रेमी

समय : नवम्बर की रात के ८ बजे

पुरस्कार

[एक सजा हुआ कमरा ! जमीन पर चेक डिज़ाइन का फर्श बिछा हुआ है। दीवार पर कुछ चित्र हैं, अधिकतर प्रकृति-सौन्दर्य के। पीछे की ओर एक खुली हुई खिड़की है जिसके ऊपर एक क्लॉक है जिसमें छ: बजने में दस मिनट बाकी हैं। क्लॉक से नीचे दो फोटो हैं जो बराबरी की ऊँचाई से लगे हुए हैं, एक पुरुष का है, दूसरा स्त्री का। ये दोनों पति-पत्नी मालूम देते हैं।

कमरे के बीच एक छोटा टेबुल है, उसके दोनों ओर कुर्सियाँ हैं। कमरे के बायीं ओर एक पक्की अंगीठी है जिसमें लाल अंगारे दीख रहे हैं। दूसरी ओर एक अलमारी है जिसमें पुस्तकें अस्त-व्यस्त रखी हुई हैं।

नवम्बर की रात के आठ बजे का समय है। श्यामनारायण (आयु २८ वर्ष) बैठा हुआ एक पुस्तक पढ़ रहा है।]

श्याम : (पुस्तक ज़ोर से पढ़ते हुए) प्रेम का रहस्य बहुत गम्भीर है। आकाश सभी दिशाओं में फैला हुआ है, उसी प्रकार प्रेम भी। आकाश का विस्तार इसलिए है कि वह दूर से दूर उदय होनेवाली तारिका को छू सके और तारिका इसलिए इतनी छोटी है कि वह आकाश के क्रोड़ में कहीं भी अपना आत्म-समर्पण कर दे। लेकिन यह कौन जानता है कि आकाश अधिक प्रेम कर सकता है या तारिका में प्रेम की अधिक मर्यादा है? फूल इतना कोमल इसलिए है कि वह अपने हृदय ही में सुगन्धि की शैया तैयार कर दे और सुगन्धि इतनी सूक्ष्म इसलिए है कि वह सृष्टि के प्रत्येक कण में अपने फूल की स्मृति जागृत कर दे। लेकिन यह कौन जानता है कि फूल अधिक प्रेम कर सकता है या सुगन्धि में प्रेम करने की अधिक शक्ति है?

उसी भाँति पुरुष और स्त्री हैं। पुरुष इसलिए कठोर है कि वह बाहरी शक्ति से स्त्री की कोमलता की रक्षा कर सके और स्त्री इसलिए कोमल है कि वह कठोर पुरुष को पत्थर न बन जाने दे, वरन् उसमें हृदय के सम्पादन की सम्भावना उत्पन्न कर सके। प्रेम के क्षेत्र में किसका महत्त्व अधिक है—कठोर पुरुष का, या कोमल स्त्री का? किन्तु यह तुलना (नलिनी—आयु १८ वर्ष—का प्रवेश। सुन्दर वेश-भूषा, आकर्षक मुख, गौर वर्ण, हरी रेशमी साड़ी, माथे पर कुंकुम की बिन्दी। वह आकर चुपचाप खड़ी हो जाती है और ध्यान से सुनती है।) क्या तब भी स्थिर रहेगी, जब पुरुष कोमल होगा और स्त्री कठोर होगी? जब चन्द्र की किरण चन्द्र-कान्त मणि पर पड़ती है तो वह पिघल जाती है। ऐसी स्थिति में पत्थर, पत्थर नहीं रह जाता, वह स्त्री हो जाता है और किरण विदेश से

आगे बढ़ने का साहस रखता हूँ।

सगर : अवश्य रखना चाहिए। देखिए, मैं भी साहस के साथ आगे बढ़ता हूँ। (गर्व से चलता है) पूछिये क्यों ? तो मैंने अपनी पत्नी से पूछा था। उसने कहा—साहस के साथ आगे बढ़ना चाहिए। उसने मुझे अपनी कटार भी दी थी। देखो, यह कटार ! (कमर से कटार निकालकर दिखाता है।)

जगमल : अरे, कटार निकालने की आवश्यकता भी नहीं पड़ेगी। मेरी यह तलवार ही काफी है। अभी कुछ देर पहले मैंने इसी तलवार से सामन्त झालौर से द्वन्द्व-युद्ध किया था। ऐसे-ऐसे वार किये कि सामन्त झालौर की तलवार उसके हाथ से छूटकर दूर जा गिरी और उसने भूमि पर गिरकर अपना मुँह फाड़ दिया। मैंने कहा—डर मत। मैं शस्त्र-हीन पर प्रहार नहीं करता। तलवार उठा और मुझ पर प्रहार कर। उसमें इतना साहस कहाँ !···एँ··· साहस कहाँ ! (अट्टहास करता है) वह अपनी तलवार उठाकर भाग गया !

सगर : मेवाड़ के महाराणा की तलवार में ऐसी ही शक्ति होनी चाहिए कि उसके सामने तलवार क्या, ढाल भी झुक जाये, धनुष तो झुका ही रहता है। मैं भी तो तुम जैसे महाराणा का भाई हूँ, प्रमुख सामन्त सगरसिंह। एक बार एक विद्रोही से मेरा भी द्वन्द्व-युद्ध हुआ था। मैंने अपनी पत्नी से पूछा। उसने स्वीकृति देकर कहा—हाँ, द्वन्द्व करो। उसमें मैंने ऐसे-ऐसे हाथ दिखलाए कि अगर मेरी तलवार न टूट जाती तो मैं उसकी हड्डी-हड्डी तोड़ देता। किन्तु कोई बात नहीं, बाद में मैंने अपनी पत्नी से पूछकर उसे क्षमा कर दिया।

जगमल : हाँ, क्षमा कर देना हम लोगों का भूषण है। महाराणा होने पर चाहता था कि इस गढ़ के भीतर जो एकलिंग का मन्दिर है, वहाँ जाकर प्रणाम कर लेता, किन्तु यहाँ कोई भी नही है।

सगर : तो क्या हानि है ! चलो, हम लोग भीतर चलें।

जगमल : नही, महाराणा का स्वागत करने के लिए यहाँ गढ के सामन्तो को रहना चाहिए। महाराणा की मर्यादा के साथ हमें भगवान् एकलिंग के मन्दिर में प्रवेश करना चाहिए।

सगर : कोई बात नही। सामन्त बाहर नही हैं तो भीतर होगे। वहाँ वे आपका स्वागत कर लेंगे। फूलो की माला तो मैं अपने साथ ही लाया हूँ। यह मत समझना कि ये फूलो की मालाएँ साधारण हैं। ये मालाएँ मेरी पत्नी ने अपने हाथों से गूँथी हैं। ये मालाएँ छिपाकर मैंने अपने गले में पहन रखी हैं। अवसर आते ही तुम्हे पहना दूँगा। देखोगे ? (अपने अँगरखे की तनी खोलता है।)

जगमल : नही, नही, रहने दो। मालाएँ तो मैं भगवान् एकलिंग को चढाना चाहता था।

सगर : तो ये मालाएँ भगवान् एकलिंग को चढा देना, लेकिन···लेकिन···

जगमल : लेकिन क्या ?

सगर : भगवान् एकलिंग तो सर्पों की माला पहनते हैं। सचमुच इन फूलों की मालाओं का क्या होगा, महाराणा। (सोचता है।) अच्छा···यदि कुछ देर तुम यहीं ठहरो तो मैं किसी सँपेरे···हाँ, सँपेरे को खोजकर ले आऊँ। उससे साँप लेकर···लेकिन इस सम्बन्ध में मैंने अपनी पत्नी से कुछ नही पूछा।

जगमल : प्रत्येक कार्य मे तुम्हारी पत्नी का स्थान है, तो जाओ,

पूछकर आओ।

सगर : अब पिताजी···महाराणा भी तो पत्नी से ही पूछकर सब कार्य करते थे, तो मैं भी करता हूँ। लेकिन पहले उसकी कही हुई बात को मानना है। उसने कहा था कि महाराणा जगमल का साथ कभी मत छोड़ना। लेकिन अगर तुम कहते हो, क्योंकि तुम नये महाराणा हो···तो···तो जाता हूँ।···जाऊँ ?

[नेपथ्य में सहसा देखने लगता है।]

ओः महाराणा···महाराणाजी, सावधान हो जाओ··· सावधान हो जाओ···तलवार लेकर···प्रताप आ रहा है। प्रताप आ रहा है। कहीं हमसे युद्ध न करे। मेरी पत्नी की कटार···यह···यह भी तुम ले लो। मैं···तो···पिता की मृत्यु से इतना दुखी हूँ कि बार-बार मेरी आँखों में आँसू आ रहे हैं···(आँख में उँगली लगाकर) देखो, ये आँसू !

जगमल : सगरसिंह ! मेरी इच्छा है कि प्रतापसिंह के आने पर तुम मेरे साथ रहोगे।

सगर : मैं रहता तो अवश्य, महाराणाजी ! किन्तु मुझे पिता की याद आ रही है।

जगमल : पिता की याद तो मुझे भी आ सकती है।

सगर : किन्तु तुम अपने को सम्हाल सकते हो, क्योंकि तुम महाराणा हो ! प्रतापसिंह क्रोध मे भरे हुए आ रहे हैं। (नेपथ्य में देखता है।) उनके साथ दो व्यक्ति और भी है। मुझे यहाँ नहीं रहना चाहिए क्योंकि मेरी पत्नी कहती थी कि जहाँ दो या तीन व्यक्ति आपस में बात करें, वहाँ नहीं रहना चाहिए। फिर मैं अपने पिता की याद को क्या करूँ ! मेरे तो आँसू वह रहे है।

[आँसू बहाने का नाट्य करता है। दुर्ग

की ओर जाता है।
दो व्यक्तियों को बन्दी बनाकर कुमार प्रतापसिंह का प्रवेश। उनके हाथ में नंगी तलवार है, जिस पर रक्त की रेखाएँ खिंची हैं जिनकी समानता उनके मुख पर खिंची क्रोध की रेखाओं से की जा सकती है।]

प्रताप : (जगमल पर तीखी दृष्टि डालकर) महा···राणा ···जग···मल ! (प्रश्नभरी मुद्रा)

जगमल : (अटकते हुए स्वर में) तुम···तुम मेरे महाराणा बनने का विरोध···विरोध करने आये हो ? तुम ज्येष्ठ हो···मैं मानता हूँ, किन्तु पिता की घोषणा तो सबको मान्य होनी···चाहिए। पिता चाहते थे कि···मैं मेवाड़ का महाराणा बनूँ। मेवाड़ की सेवा करना पुण्य है। और···और···पिता की आज्ञा टालना पाप···पाप है।

प्रताप : (तीखे स्वर में) और अकबर बादशाह को गुप्त सन्धि-पत्र लिखना पुण्य है या पाप ?

जगमल : सन्धि-पत्र लिखने में पुण्य और पाप का प्रश्न नहीं उठता, भाई प्रतापसिंह ! युद्ध और सन्धि तो हमारे नीति के अंग हैं।

प्रताप : पिता की मृत्यु होते ही अकबर को सन्धि-पत्र लिखना, यह नीति है ? तुमने मेवाड़ के सभी सामन्तों की सम्मति ली थी ? भूमि का एक कण आकाश में उड़ जाये और कहे—मैं सूर्य हूँ। जो सन्धि-पत्र आज तक मेवाड़ ने नहीं लिखा, वह सन्धि-पत्र तुम महाराणा बनने के दूसरे ही क्षण अपनी कायरता के प्रमाण में बादशाह अकबर को भेजना चाहते थे ? वह सन्धि-पत्र यह है, (अँगरखे के भीतर से निका-

लते हैं) जो इन देश-द्रोहियों का पीछा कर मैंने छीना है। (बन्दियों को संकेत कर) पहचानो इन्हें, ये कौन हैं। (बन्दियों से) मुख सीधा करो। महाराणा जगमल पहचान सकें कि तुम कौन हो।

[बन्दी सिर उठाकर जगमल की ओर देखते हैं।]

प्रताप : (निर्देश करते हुए) ये सामन्त जैतसिंह हैं, विदनौर के राठौर और यह हमारा छोटा भाई है, रायसिंह। अपने छोटे भाई को सन्देश-वाहक बनाकर भेजने में तुम्हें लज्जा नहीं आयी ? इनके साथ दो दूत और थे जो तुम्हारा यह सन्धि-पत्र लेकर अकबर बादशाह के पास जा रहे थे। उन दोनों दूतों का रक्त मेरी तलवार पर है। (तलवार उठाते हुए दिखलाते हैं।)

जगमल ; यह तुम्हारी क्रूरता है, कुमार प्रतापसिंह ! महाराणा के कार्य में कोई रुकावट नहीं डाल सकते।

प्रताप : एक दिन का कायर महाराणा मेवाड़ की शताब्दियों की स्वाधीनता का इतिहास मिटा दे ? एक विष की बूंद अमृत के कुम्भ को दूषित कर दे ? एक शूद्र वेद की ऋचाओं का अशुद्ध उच्चारण करे ? मैं उसे न रोकूं ?

जगमल : (तीव्रता से) कुमार प्रतापसिंह ! मेरी मर्यादा···

प्रताप : मर्यादा ? तुम्हारी मर्यादा ? अकबर को तुमने सन्धि-पत्र लिखा, तब यह मर्यादा कहाँ थी ? पिता की मृत्यु के पूर्व अपने को महाराणा घोषित किया, तब यह मर्यादा कहाँ थी ? भाइयों में फूट डालकर ज्येष्ठ भ्राताओं का अपमान किया, तब यह मर्यादा कहाँ थी ? मर्यादा की दुहाई देनेवाले नये महाराणा ! तुमने सामन्तों तक की मर्यादा नहीं रखी। मेवाड

के विश्वासघाती दूतों को मारना मर्यादा की रक्षा है, मर्यादा की हानि नही ।

जैतसिंह : महाराज ! हमें भी मार डालिए ।

रायसिंह : मैं भी अपने भाई की तलवार से कट जाऊँ तो अच्छा है ।

प्रताप : नही । तुम्हे माँगने से मृत्यु भी नही मिलेगी । यदि अपनी मृत्यु माँगते हो तो नये महाराणा श्री श्री सवाई महाराणा जगमलसिंह से माँगो । (संकेत करते हैं ।) देशद्रोही राजपूत ! तुम मेवाड की स्वतन्त्रता इस छोटे-से कागज़ में बन्द कर अकबर बादशाह को भेंट करने के लिए ले जा रहे थे ? तुम्हे लज्जा नही आयी ? तुम महाराणा उदयसिंह के अन्तिम संस्कार मे सम्मिलित होने के लिए नही रुके और महाराणा के मरण-शोक को विजय का हर्ष बनाकर विदेशी यवन के चरणो मे झुकने के लिए चल पडे ?

जैतसिंह : महाराणा जगमल की ऐसी ही आज्ञा थी ।

रायसिंह : और यह सन्धि-पत्र भाई जगमल ने ही मुझसे लिखाया था ।

प्रताप : क्यो महाराणा जगमल । भाई तो सत्य ही कहेगा ।

जगमल : (उच्छृखलता से) सत्य है । मेवाड़ का कल्याण इसी में है । जब सारे मेवाड में अशान्ति है तो अकबर बादशाह की सहायता से ही शान्ति स्थापित हो सकती है ।

प्रताप : शान्ति स्थापित करनेवाले महाराणा ! तुम्हारी शक्ति के समुद्र में क्या एक बूँद पानी भी नही है कि तुम उससे तृषित प्रजा की प्यास बुझा सको । और क्या तुम समझते हो कि विष की बूँदों से प्यास बुझेगी ? बादशाह अकबर की सहायता तो ऐसे विष का महा-

सागर है जिसमें सारा मेवाड़ डूबकर सदैव के लिए मृतक बन जायेगा। तुम शायद सारे मेवाड़ को मृतक बनाकर उसकी प्यास बुझाना चाहते हो?

जगमल : जो कार्य शक्ति से सम्भव नहीं, वह नीति से सम्भव है।

प्रताप : तो तुम उसी नीति का अनुसरण करना चाहते हो जिस नीति से राजपूत राजाओं ने अपनी बहनों और बेटियों को शाही हरम में भेज दिया है? अपनी पच्चीस बहनों में से किन-किनको तुम शाही हरम की बेगमें बनाना चाहते हो?

जगमल : कुमार प्रतापसिंह! चुप रहो। मेरी नीति की आलोचना करने का अधिकार किसी को नहीं है। महाराणा महाराणा ही है।

प्रताप : (दाँत पीसकर) बार-बार महाराणा! महाराणा बनने का अभिमान करनेवाले जगमल! मेवाड़ के सिंहासन पर बैठनेवाले तुम्हीं एक महाराणा नहीं हो। बप्पा रावल की कीर्ति सुनी है, जिन्होंने गजनी के बादशाह सलीम को युद्ध-क्षेत्र में हराकर उसका राज्य मेवाड़ में मिला लिया था? तुमने रावल जैतसिंह का नाम सुना है जिन्होंने दिल्ली के सुलतान अल्तुतमश से युद्ध कर उन्हें रणभूमि से पीछे हटा दिया था? तुम रावल रतनसिंह का नाम भी जानते होगे जिन्होंने चित्तौड़ की रक्षा करते हुए वीर-गति प्राप्त की? तुमने महाराणा हमीर का नाम भी सुना होगा जिन्होंने मुहम्मद तुगलक की शाही सेना को पराजित किया था? इतिहास में 'हमीर हठ' अमर है, महाराणा?

जगमल : मैं अधिक कुछ नहीं सुनना चाहता।

प्रताप : तुम कुल-कलंक हो, जगमल! जिसे अपने पूर्वजों

की कीर्ति-गाथा अच्छी नहीं लगती। जिस दुर्ग के नीचे तुम खड़े हो, जगमल ! वह हमारे पूर्वज महाराणा कुम्भा का बनवाया हुआ है। मांडू के महमूद खिलजी को युद्ध मे हराकर महाराणा कुम्भा ने छ महीने तक उसे चित्तौड़ मे बन्दी बनाकर रखा, बाद मे बिना शर्त के छोड़ दिया। इस विजय की स्मृति मे महाराणा कुम्भा ने चित्तौड़ में एक विशाल कीर्ति-स्तम्भ का निर्माण किया, वह तुमने देखा ?

जैतसिंह : अनेक वर्षों तक उस कीर्ति-स्तम्भ की रक्षा का भार मुझ पर था।

रायसिंह : और मैंने भी अनेक बार कीर्ति-स्तम्भ के शिखर पर बैठकर सूर्योदय का दृश्य देखा है।

प्रताप : अब महाराणा जगमल कुम्भलगढ़ के शिखर पर बैठकर मेवाड के सूर्यास्त का दृश्य देखना चाहते हैं। महाराणा जगमल ! हम लोग सूर्यवंशी हैं। इस सूर्यास्त के दृश्य में कही हमारे वंश का सूर्य ही न डूब जाये !

जगमल : इस सूर्यास्त के बाद चन्द्रमा की शीतल चाँदनी आयेगी।

प्रताप : चन्द्रमा की शीतल चाँदनी नही मूर्ख महाराणा ! इस सूर्यास्त के बाद घोर अमावस्या का अन्धकार है। बादशाह अकबर की कूटनीति समस्त राजपूताने के लिए कितनी भयानक है, यह तुम नही जानते। राजपूतों की बहादुरी को वह अच्छी तरह जानता है। उसे मालूम है कि लड़ाई मे जीतकर राजपूताने को अधिकार मे लाना कठिन है। इसलिए उसने राजपूतों को प्रलोभन देकर अपना सेवक बना लिया है। अम्बर के राजा मानसिंह को उसने सातहजारी मनसब दिया है। बूंदी के राव रतन हाड़ा और बीकानेर

के राव रामसिंह पंचहजारी मनसबदार बनकर उसके गुलाम बन गये हैं। अब शायद मेवाड़ का राणा जगमल भी अकबर का पचहजारी मनसबदार बनकर उसके दरबार मे हाथ बाँधकर खड़ा होगा।

जैतसिंह : ऐसा नही होगा, राणा प्रताप ! हम सब मेवाड़ के सेवक रहेंगे।

रायसिंह : राणा प्रताप ! मैं भी कुमार जगमल की बात न मानकर तुम्हारी आज्ञानुसार चलूँगा।

प्रताप : तब मैं तुम दोनों को मुक्त कर दूँगा। एकमात्र महाराणा जगमल ही अकबर की सेवा में पहुँचेंगे।

जगमल : जैतसिंह और रायसिंह भले ही तुम्हारे प्रभाव में आ जायें, प्रताप ! मुझ पर तुम्हारी बातों का कोई भी प्रभाव नही पड सकता।

प्रताप : जो अपने स्वार्थ में अन्धा हो चुका है, उस पर क्या प्रभाव पड सकता है ? किन्तु महाराणा जगमल ! यह सोचो कि मेवाड़ की स्वतन्त्रता विदेशियों द्वारा आज तक कलंकित नहीं हुई। चित्तौड़गढ को अनेक बार विध्वस किया गया, किन्तु वीरों ने संख्या मे कम होने पर भी युद्ध किया और वीर-गति प्राप्त की। नारियो ने जौहर व्रत में अपने शरीर को अग्निकुण्ड में होम कर दिया और अपने सम्मान को सुरक्षित रखा। जयमल और पत्ता की कीर्ति क्या युद्ध-भैरवी बनकर तुम्हे युद्ध का निमन्त्रण नही देती ? जयमल लँगड़े हो गये थे किन्तु कल्ला राठौर के कन्धे पर चढ़कर उन्होंने दोनों हाथो में तलवारें लेकर हज़ारों शत्रुओं को मृत्यु के घाट उतार दिया और स्वयं मेवाड़ की स्वतन्त्रता के लिए धराशायी हो गये। सोलहवर्षीय पत्ता चूड़ावत ने जैसी वीरता दिखलायी वैसी वीरता शताब्दियों तक मेवाड़ को अमर कर

सकती है। बादशाह अकबर उनकी वीरता पर मुग्ध हो गया था। क्या तुम भी वीर जयमल और वीर पत्ता की भाँति बादशाह अकबर को अपनी वीरता से मुग्ध नहीं कर सकते ?

जगमल : समय पर वैसी वीरता दिखलायी जा सकती है।

प्रताप : तो इसी समय वैसी वीरता क्यों नहीं दिखलाते ? तुम महाराणा बनो, मैं तुम्हारा सामन्त बनकर तुम्हारी सहायता करूँगा। यद्यपि मैं तुम्हारा ज्येष्ठ भ्राता हूँ, किन्तु मैं महाराणा नहीं बनूँगा। तुम्हारा सहायक बनूँगा। लो, यह सन्धि-पत्र, इसे फाड़ दो।
(सन्धि-पत्र आगे बढ़ाते हैं।)

जगमल : सन्धि-पत्र तो मैं नहीं फाड़ सकता। तुम किसी भी समय मुझे पराजित कर राणा बन सकते हो। मेवाड़ के सामन्त तुम्हारा ही साथ देंगे। मुझे भी तो सहायता के लिए कोई शक्ति चाहिए !

प्रताप : और यह शक्ति अकबर की ही होगी ? मेवाड़ के पड़ोसी राज्यों की नहीं हो सकती ?

जगमल : पड़ोसी राज्य सब अकबर के मित्र हैं।

प्रताप : मित्र हैं या दास ? वह उन्हें कठपुतलियों की तरह नचाता है। क्या मेवाड़ का महाराणा भी नाचना चाहता है ?

जगमल : सन्धि का अर्थ नाचना नहीं है ?

प्रताप : तू मुझे परिभाषाएँ सिखलाना चाहता है ? जगमल ! तेरे सभी साथियों ने तुझे छोड़ दिया है। यदि मैं चाहूँ तो तुझ जैसे देश-द्रोही का इसी क्षण वध कर सकता हूँ, किन्तु पिता की मृत्यु के उपरान्त मैं अपने भाई का वध नहीं करूँगा। मेवाड़ की यशोगाथा कलंकित नहीं होगी।

[नेपथ्य में हलचल होती है। सालुम्बरा-

नरेश, सामन्त झालोर, सामन्त चन्दावत, ग्वालियर-नरेश महाराज रामचन्द्र तम्वर और भील सरदार का प्रवेश। भील सरदार के हाथों में राजमुकुट है। महाराणा जगमल स्तब्ध होकर देखता है।]

सालुम्बरा : महाराणा प्रतापसिंह की जय!

[सभी जय-नाद समवेत स्वर में करते हैं। जगमल के मुख पर क्रोध की रेखाएँ अंकित हो जाती हैं।]

जगमल : महाराणा उदयसिंह की घोषणा के उपरान्त अन्य कोई व्यक्ति महाराणा नहीं हो सकता।

सालुम्बरा : सुनो, कुमार जगमल! मैं तुम्हें महाराणा के नाम से सम्बोधित नहीं कर रहा हूँ, क्योंकि महाराणा उदयसिंह की घोषणा अन्तःपुर की घोषणा है, रण-क्षेत्र की घोषणा नहीं है। महाराणा उदयसिंह से जब मेवाड़ के समस्त सामन्त सन्तुष्ट नहीं थे, तब उनके सामने उस घोषणा का क्या मूल्य हो सकता है?

जगमल : महाराणा की घोषणा का मूल्य सर्वोपरि है।

रामसिंह तम्वर : नहीं है, कोई मूल्य नहीं है। मैं ग्वालियर-नरेश हूँ, मैं नरेश होने के नाते जानता हूँ कि जब शेरशाह सूरी जोधपुर जीतने के बाद चित्तौड़ की ओर बढ़ा और वह चित्तौड़ से बारह कोस पर ही था तभी मेवाड़ के महाराणा उदयसिंह ने युद्ध से डरकर चित्तौड़गढ़ की कुंजियाँ उसके पास भिजवा दी थीं। कायर महाराणा उदयसिंह...

प्रताप : महाराज तम्वर! मृत्यु के बाद मेरे पिता की निन्दा न हो!

रामसिंह तम्वर : प्रताप ! मैं तुम्हारी मर्यादा की प्रशंसा करता हूँ किन्तु महाराणा उदयपुर के कायर पुत्र जगमल से मेवाड़ के यश की रक्षा किसी प्रकार नहीं हो सकेगी।

जगमल : ऐसा कहने का अधिकार किसी को नहीं हो सकता।

सामन्त चन्दावत : अवश्य हो सकता है। इतिहास इसका साक्षी है कि जब बादशाह अकबर ने चित्तौड़ पर घेरा डाला था तब महाराणा उदयसिंह चित्तौड़ का किला राठौर जयमल और चूडावत पत्ता पर छोड़कर स्वयं पहाड़ों पर भाग गये थे। जयमल और पत्ता ने मेवाड़ की रक्षा के लिए युद्ध-भूमि में अपने प्राण विसर्जित किये थे, किन्तु ये कुमार जगमल जो महाराणा बने हुए हैं, मेवाड़ को दासता की शृंखला में बाँधने के लिए बादशाह अकबर की सेवा में सन्धि-पत्र भेजना चाहते हैं जिसकी सूचना अभी ही मुझे प्राप्त हुई है।

प्रताप : वह सूचना सत्य है। यह महाराणा जगमल का लिखाया हुआ सन्धि-पत्र है जिसे फाड़ने में महाराणा जगमल को आपत्ति है।

भील सरदार : तो हम उसे फाड़ेंगे। (भील सरदार सन्धि-पत्र लेकर फाड़ देते हैं।) मैं भील सरदार हूँ। मेवाड़ हमारी मातृभूमि है। मैं आज इस बात की प्रतिज्ञा करता हूँ कि हम सब भील मिलकर अकबर बादशाह के किसी भी प्रकार के आक्रमण का सामना करेंगे। प्राण रहते मेवाड़ का अन्न किसी प्रकार नहीं छूने देंगे। अकबर बादशाह अगर प्रार्थना भी करें तो भी हमारा मेवाड़ उनसे साथ सन्धि नहीं करेगा।

भामाशाह : धन्य हो भील सरदार ! तुम पर और तुम्हारे भील

सैनिकों पर मेवाड़ को गर्व है। मैं तुम्हारा पूर्ण समर्थन करता हूँ। मै भी प्रण करता हूँ कि मैं मेवाड़ के समस्त सामन्तो का सगठन करूँगा और हम सब युद्ध के लिए सदैव ही कटिवद्ध रहेगे। जिस अकबर बादशाह ने अपनी कूटनीति से राजपूतों को मर्यादा से गिराने का घृणित कार्य किया है, उसके साथ सन्धि करना मेवाड़ के लिए अपमानजनक है।

सालुम्बरा : कुमार जगमल ! तुम्हे इस सम्बन्ध मे कुछ कहना है ?

जगमल : (उपेक्षा से) मुझे कुछ नहीं कहना।

सालुम्बरा : मूर्ख और हठी कुमार जगमल ! हम लोगो ने नेपथ्य से तुम्हारे और प्रताप के बीच जो बातें हुई हैं, वे सुनी हैं। यदि उनसे तुम्हारे मन मे कोई परिवर्तन नही हुआ, तो तुम मेवाड में रहने के योग्य भी नहीं हो।

जगमल : आप लोगों का यह निर्णय है ?

सालुम्बरा : अपने नीच और मर्यादाहीन कार्यों के लिए यह दण्ड बहुत छोटा है।

रामचन्द्र तम्वर : इसी दण्ड के साथ मैं ग्वालियर राज्य की ओर से यह प्रस्ताव करना चाहता हूँ कि महाराणा उदयसिंह की मृत्यु के उपरान्त मेवाड़ का उत्तराधिकार मेवाड के आदर्शों के अनुसार कुमार प्रतापसिंह को प्राप्त हो और वे महाराणा का पद ग्रहण करें।

जगमल : मैं इसका विरोध करता हूँ।

सालुम्बरा : तुम चुप रहो, कुमार जगमल ! महाराणा उदयसिंह की मृत्यु के उपरान्त उनकी घोषणा भी समाप्त हो गयी। मैं सालुम्बर राज्य की ओर से ग्वालियर-नरेश महाराजा रामचन्द्र तम्वर के प्रस्ताव का समर्थन करता हूँ और महाराणा प्रताप को मेवाड का

अधिपति घोषित करता हूँ।

भील सरदार : महाराज ! मैं भी घोषित करता हूँ कि मेवाड़ के समीप और अरावली पहाड़ पर रहनेवाले सभी भील सैनिक प्राणपण से महाराणा प्रताप के सहायक बने रहेंगे।

प्रताप : मैं आप सबके प्रति कृतज्ञता के साथ अपनी मातृभूमि को प्रणाम करता हूँ।

चन्दावत : कुमार जगमल ! अब तुम महाराणा नहीं हो। तुम्हारे सिर पर यह राजसी पाग लज्जित हो रही है। यदि तुम्हें आपत्ति न हो तो इसे उतारकर हाथ में ले लो। एक ही समय में एक राज्य के दो महाराणा नहीं हो सकते।

झालौर : कुमार जगमल को कष्ट होगा, वह पाग मैं उतार देता हूँ।

जगमल : (चिढ़कर) मेरा अपमान करने का साहस मत करो, सामन्त झालौर !

सालुम्बरा : शीघ्रता नहीं है, सामन्त झालौर ! कुमार जगमल के पास इतनी बुद्धि तो होगी कि वे अपनी पाग स्वयं अपने हाथों से उतार लेंगे।

चन्दावत : कुमार जगमल ! तुम्हारा सन्धि-पत्र तो सम्राट् अकबर की सेवा में नहीं पहुँच सका। अब सम्भवतः तुम्हीं अपने को उनके चरणों में अर्पित कर आना।

जगमल : आपके परामर्श की आवश्यकता नहीं है।

झालौर : सत्य है, वे सामन्त चन्दावत के परामर्श के बिना ही सम्राट् अकबर के चरणों में पहुँच जायेंगे।

रामचन्द्र तम्बर : अब सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य होना शेष है। (भील सरदार के हाथ से राजमुकुट लेकर) अब मैं मेवाड़ के समस्त सामन्तों की ओर से मेवाड़ का यह पवित्र और गौरवशाली मुकुट महाराणा प्रताप के मस्तक पर सुसज्जित करता हूँ।

[तिलक लगाकर राजमुकुट महाराणा प्रताप को पहनाते हैं।]

सब : (समवेत स्वर में) मेवाड़ भूमि की जय! महाराणा प्रताप की जय!

[कुमार जगमल मुंह बनाये खड़ा रहता है और धीरे से अपनी पाग उतारता है।]

महाराणा प्रताप : मेवाड़ भूमि के वीरो! आज अपनी मातृभूमि मेवाड़ को प्रणाम कर मैं यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि जो विश्वास मेरे सामन्तों ने मुझ पर किया है, उसकी जीवनभर रक्षा करूंगा और अपने रोम-रोम से अपनी मातृभूमि की सेवा करता हुआ उसकी स्वतन्त्रता के लिए अपने प्राण उत्सर्ग कर दूंगा।

सब : (समवेत स्वर में) महाराणा प्रताप की जय!
मेवाड़ भूमि की जय!
भगवान् एकलिंग की जय!

[इसी समय गढ़ के भीतर से भगवान् एकलिंग की आरती के घण्टे बजते हैं और साथ ही शंख-घोष होता है।
राजमुकुट-मंजूषा में रखे हुए पुष्पों को उठाकर एक ओर से सामन्त चन्दावत और दूसरी ओर से सामन्त झालौर राणा प्रताप पर पुष्प-वर्षा करते हैं।]

आये हुए प्रियतम की तरह सीधी रेखा में खड़ी हो जाती है। तब वह किरण, किरण नहीं रह जाती, वह पुरुष हो जाती है। (नलिनी मुस्कराती है।) यह मनोविज्ञान का एक गूढ़ प्रश्न होगा। जब स्त्री पुरुष बन जायेगी और पुरुष स्त्री बन जायेगा। स्त्री की कठोरता··· (सिर ऊपर उठाता है और नलिनी की ओर देखकर पुस्तक पढ़ना छोड़कर सहसा कुर्सी से उठ खड़ा होता है। उसके स्वर में उल्लास और कौतूहल है।)

श्याम : अच्छा, आप कब आ गयी? मुझे मालूम ही नहीं हुआ! आइए।

नलिनी : (आगे बढ़ते हुए) आप तो स्त्री की कठोरता के पीछे पड़े हुए थे। *आपको क्या मालूम होता!*

श्याम : बात तो बड़े मार्के की है। आप ही बताइए, कितने पुरुष हैं जो अपनी स्त्री की स्त्री हो जाते है और···और (खाँसकर) जब घर से बाहर निकलते हैं तो पुरुष बनकर लोगों पर अपना रोब दिखलाने का नाटक करते हैं, लेकिन घर मे पैर रखते ही वे स्त्री बन जाते हैं? इस उलझन में प्रेम बेचारा क्या-क्या रूप धरे? स्त्री के लायक बने, या पुरुष के लायक, आप ही बतलाइए!

नलिनी : (मुस्कराकर) आप क्या हैं, स्त्री या पुरुष?

श्याम : (लज्जित होकर) आप मुझसे सीधा प्रश्न न करें तो अच्छा है! लेकिन मैं समझता हूँ कि प्रत्येक आदमी पब्लिक में पुरुष होता है और प्राइवेट मे स्त्री। यानी मेरे कहने का मतलब यह है कि बाहर का काम करने मे उसे कठोर बनना पड़ता है और घर का काम करने मे उसे नम्र या कोमल बनना पड़ता है। यानी बाहर पुरुष, अन्दर स्त्री!

नलिनी : और अगर स्त्री बाहर का काम करनेवाली हो तो वह पुरुष बन जाये ?

श्याम : (संकुचित होकर) अब यह मैं आपके सामने कैसे कहूँ? आप चाहें तो आपको इसके उदाहरण भी मिल सकते हैं। दुनिया बहुत बड़ी है और वह सब तरह की चीज़ों की नुमाइश रखती है ! अच्छा, फिलहाल छोड़िए इन बातों को। इन बातों में और देर हो रही है। लेकिन हाँ, आज आप फिर देर से आयीं ! मैंने आपसे कितनी बार प्रार्थना की कि आप जरा जल्दी आ जाया कीजिए, लेकिन···

नलिनी : मैं क्या करूँ, मुझे काम बहुत करना पड़ता है। फुर्सत मिले तो जल्दी आ जाऊँ।

श्याम : तो कुछ दिनों के लिए आप अपना कार्य कुछ कम नहीं कर सकतीं ?

नलिनी : मेरे वश की बात हो तो कार्य कुछ कम भी कर लूँ, लेकिन मैं यूनिवर्सिटी के प्रोफेसरों को क्या कहूँ? इतना अधिक काम दे देते हैं कि खत्म होने पर ही नहीं आता।

श्याम : वे सिर्फ आपको ही अधिक काम देते हैं या सबको ?

नलिनी : मामूली तौर पर कहते तो सभी से हैं, लेकिन मेरी ओर देखकर कहते हैं। ऐसी हालत में और चाहे काम न करें लेकिन मुझे तो करना ही होता है।

श्याम : हाँ, आप पर उनको विशेष विश्वास है।

नलिनी : विश्वास की बात क्या ! लेकिन हम लोगों को पढ़ाते बहुत अच्छी तरह से हैं। कभी-कभी पढ़ाने के साथ मेरी वेश-भूषा की आलोचना भी कर जाते हैं—कभी साड़ी का बार्डर, कभी माथे की बिन्दी।

श्याम : मुमकिन है, परीक्षा में आपके माथे की बिन्दी पर ही कोई सवाल पूछ लिया जाये।

नलिनी : (हँसकर) आज आप 'मूड' में मालूम देते हैं।

श्याम : 'मूड' में तो तब आ पाऊँ, जब मैं किसी यूनिवर्सिटी का प्रोफेसर हो जाऊँ! अच्छा... (क्लॉक की ओर देखकर) समय हो गया। छ बजने मे सिर्फ पाँच मिनट ही बाकी हैं। अब मैं जाऊँ, नहीं तो देर होगी।

नलिनी : अच्छी बात है; जाइए! मेरी ओर से आप निश्चिन्त रहिए।

श्याम : आपसे मुझे यही आशा है! अच्छा। (नलिनी की ओर देर तक देखकर जाता है। नलिनी एक बार चारों ओर ध्यान से देखती है। अपने कपड़ों की सिलवटें ठीक करती है। फिर सावधानी से अलमारी में पुस्तकें सजाती है। एक बार खिड़की से बाहर की ओर झाँकती है, जैसे किसी के आने का रास्ता देखती हो। फिर अँगीठी के पास आकर आग तेज करती है और वहीं एक छोटी-सी कुर्सी पर बैठ जाती है। फिर वह अलमारी से एक पुस्तक निकालती है और पढ़ने के लिए वहीं अँगीठी के पास बैठ जाती है। गरम शाल सँभालकर ओढ़ लेती है। पुस्तक पढते हुए कभी-कभी बीच में वह खिड़की की ओर देख लेती है और फिर पुस्तक की ओर दृष्टि कर लेती है। नेपथ्य में दूर से आती हुई गाने की ध्वनि उसे सुनायी पड़ती है। उसके मुख पर प्रसन्नता की रेखा खिंच जाती है। वह पुस्तक से ध्यान हटाकर भौंहें सिकोड़कर सुनने लगती है। वह ध्वनि धीरे-धीरे पास आती हुई जान पड़ती है। उस ध्वनि को पहचानने के लिए वह कौतूहलवश खिड़की के समीप खड़ी हुई बाहर देखने लगती है। सन्दिग्धता और निश्चयात्मकता के भाव भृकुटि-संचालन से उसके मुख पर आ-जा रहे हैं। अब गाने की *ध्वनि उसके अधिक समीप आ गयी है। वह हर्षातिरेक*

से दरवाजे के समीप जाती है। दो क्षण रुकने के बाद वह फिर खिड़की के समीप जाकर बाहर देखते हुए गीत सुनने लगती है।)

वही होगा जो होना है !
तू गा ले दिन चार, अन्त में सब दिन रोना है !
वही होगा जो होना है !
यह तेरी मीठी हँसी,
है सपने की बात।
अन्धकार से है घिरी
यह तारों की रात।
मिटने को ही बना जगत का कोना-कोना है।
वही होगा जो होना है !
अपने जाने की दिशा,
तू जाता है भूल।
काँटों की इस राह में,
कहाँ मिलेंगे फूल।
चल तू अपनी राह, अन्त तक जीवन ढोना है।
वही होगा जो होना है !

[धीरे-धीरे यह आवाज दरवाजे तक आती है, फिर क्षीण होते-होते रुक जाती है। नलिनी दरवाजे के समीप दबे पाँवों जाकर खड़ी हो जाती है। खट्-खट् की आवाज होती है। नलिनी शीघ्रता से दरवाजा खोलती है। गेरुए वस्त्र पहने हुए एक व्यक्ति का प्रवेश। मुख पर दाढ़ी और मूंछ। वह चौकन्ना होकर चारों ओर देखता हुआ आगे बढ़ता है। आकर दरवाजा बन्द करता है। वह नलिनी को देखकर कमरे के चारों ओर

दृष्टि फेंकता है। नलिनी उसकी ओर तीव्र दृष्टि से देखती है, फिर एकाएक बोल उठती है।]

प्र···का···श

व्यक्ति : (ओठ पर उँगली रखकर) ज़ोर से नहीं ! धीरे बोलो, उजेला कम कर दो !

नलिनी : (उत्सुकता से किन्तु कुछ धीमे स्वर में) तो तुम आ गये ! प्रकाश !

व्यक्ति : (कुछ तीव्रता से) नादान मत बनो, नलिनी ! उजेला कम कर दो। (नलिनी एक बत्ती बुझा देती है।)

व्यक्ति : तो तुम अकेली हो नलिनी ?

नलिनी : हाँ, अकेली ! तुम आये कब ?

व्यक्ति : (नलिनी के प्रश्न का उत्तर न देते हुए) देखो, खिड़की बन्द कर दो। नहीं, खिड़की रहने दो, सिर्फ परदा गिरा दो ! (नलिनी खिड़की का पर्दा गिरा देती है।)

व्यक्ति : तुम्हारे पतिदेव कहाँ हैं ?

नलिनी : अभी-अभी सिनेमा देखने गये है। मैंने कहा था कि आज का फिल्म बहुत अच्छा है। ज़रूर देखिए। ग्रेटा गार्बो का है 'मैटाहारी'। जासूसी फिल्म होने की वजह से बात उन्हे भी पसन्द आयी। वे चले गये। आज-कल वे भी जासूसी कर रहे हैं।

व्यक्ति : हाँ, पुलिस के आदमियों को जासूसी का काम भी जानना चाहिए। वे जल्दी तो नहीं लौट आयेंगे ?

नलिनी : आशा तो नहीं है।

व्यक्ति : ठीक है। (गेरुआ वस्त्र उतारते हुए) माफ करना, नलिनी। मैंने तुम्हारे प्रश्न का उत्तर अभी तक नहीं दिया। मेरी परिस्थिति ही ऐसी है।

नलिनी : (प्रेमावेश में) कोई बात नहीं, प्रकाश, तुम आये कब ? आओ, यहाँ, अँगीठी के पास बैठ जाओ। ठण्ड बहुत

लग रही होगी।...ओह...अब जाकर, तुम वहाँ आये हो।

[प्रकाश इस समय तक अपना गेरुआ वस्त्र उतार चुका है। वह नीचे हाफ पंट और एक ऊनी बनियान पहने हुए है। सुडौल और गठा हुआ शरीर है। आयु २२ वर्ष]

प्रकाश : हाँ, अपनी नलिनी के लिए जान हथेली पर रखकर!

नलिनी : (हँसकर) और इस दाढ़ी-मूँछ मे तो तुम पहचाने भी नही जाते। बिलकुल बाबाजी ही बन गये!

प्रकाश : (नकली दाढ़ी-मूँछ निकालते हुए) कहीं इस वेश से तुम धोखा न खा जाओ! कही मुझे भूल न जाओ!

नलिनी : वाह, वही नलिनी अपने प्रकाश को भूल सकती है? हजारों आदमियो में मैं तुम्हे पहचान लूँगी।

प्रकाश : यह तुम्हारी कृपा है, नलिनी!

नलिनी : मेरी कृपा नही, तुम्हारा साहस है।

प्रकाश . साहस क्या है, अनजान रास्ते और अँधेरी भीगी हुई रातें...

नलिनी : (बीच ही में) तुम्हे ठण्ड लग रही होगी, प्रकाश! यहाँ अँगीठी के पास बैठ जाओ।

प्रकाश : हाँ, ठण्ड तो बहुत लग रही है, लेकिन आज अँगीठी के पास बैठ जाऊँ तो कल चल भी नही सकूँगा। मेरी आदत खराब हो जायेगी।

[अँगीठी के पास आकर एक कुर्सी पर बैठता है और आग के सामने अपने हाथ फैलाता है।]

नलिनी : इस ठण्ड मे तुम्हे एक ही स्थान पर रहना चाहिए। तुम्हें कुछ ओढ़ने के लिए दूँ? (अपना शाल उतारने के लिए प्रस्तुत होती है।)

प्रकाश : नहीं-नहीं, मैं ठीक हूँ। आग काफी तेज है। शाल के बगैर तुम्हें ठण्ड लग जाने का डर है। मेरा क्या ? मैं तो इससे सौगुनी ठण्ड बर्दाश्त कर सकता हूँ।

नलिनी : (गहरी साँस लेकर) ओह, तुम्हारी क्या दशा हो गयी है, प्रकाश ? लाखों रुपयों के मालिक होकर तुमने कैसा जीवन अपना लिया ?

प्रकाश : नलिनी के बिना लाखों रुपयों की कोई कीमत नहीं। जाने दो इन बातों को। अब तो सब सपना हो गया। जब मैं नलिनी को नहीं पा सका तो रुपयों की क्या आवश्यकता रह गयी ! रुपया किसके लिए होता ? मेरे लिए ? (हँसकर) मैं तो कहीं भी अपना पेट भर सकता हूँ।

नलिनी : (गहरी साँस लेकर) ओह, मेरे कारण तुम्हें बहुत कष्ट हुआ प्रकाश ?

प्रकाश : मुझे क्या कष्ट है ? बेचारी पुलिस को कष्ट है ! उसे इस ठण्ड में जाने कहाँ-कहाँ घूमना पड़ता है ! वह बहुत परेशान है ! कहीं भी मेरी सुगन्धि या दुर्गन्धि पा जाये, तो जन्मभर के लिए मुझे जेल में डाल दे। फिर मैं अपनी नलिनी से कभी मिल भी न सकूँ !

नलिनी : तुम बहुत होशियार हो, प्रकाश ! पुलिस तुम्हें नहीं पा सकती !

प्रकाश : (अपने सिर पर हाथ फेरते हुए) यह तुम्हारी कृपा है, नलिनी ! नहीं तो प्रकाश पुलिस-इन्स्पेक्टर के मकान में शाम को छः बजे प्रवेश करे और फिर भी न पकड़ा जाये। यह सब तुम्हारी कृपा है, नलिनी ! सिर्फ तुम्हारी कृपा !

नलिनी : मेरी कृपा नहीं प्रकाश, यह तुम्हारा साहस है।

प्रकाश : साहसी व्यक्ति तो मर भी सकता है, लेकिन मैं जिन्दा हूँ। और मेरी साँस मेरे पास नहीं है, वह तुम्हारे पास

है, तुम्हारे दिल मे है ! और उसे पाने के लिए मुझे साहसी बनना पड़ता है । यो कहो कि मेरा प्रेम मेरे साहस से भी अधिक बलवान है । तभी तो इस अँधेरी रात में चारो ओर पुलिस से घिरा होकर भी तुम्हारे पास आने से मै अपने को नहीं रोक सका ।

नलिनी : (अर्द्ध-निद्रित हुए स्वर में) मैं जानती हूँ, प्रकाश !

प्रकाश : मेरे गाने से तो तुमने मुझे पहचान लिया होगा ?

नलिनी : हाँ, उसी समय । तुमने बारह तारीख को पत्र लिखा था—वह मुझे आज से पाँच दिन पहले ही मिल गया था। मैं तो मन-ही-मन तुम्हारे गीत को अनेक बार गा चुकी थी—'वही होगा, जो होना है !' बड़ा सुन्दर गीत है'" (स्वर में गाती है) 'वही होगा जो होना है !' इसे सुनकर मैं उसी समय समझ गयी कि तुम आ रहे हो ! बड़ा अच्छा गाते हो, प्रकाश !

प्रकाश : (हँसकर) तुम्हारे प्रेम का स्वर मुझे मिला है न ? तभी इतनी अच्छी रागिनी निकलती है ! (सहसा) दरवाजा बन्द है ?

नलिनी : हाँ, अच्छी तरह से ।

प्रकाश : अच्छा, जरा उजेला तेज कर दो । इस प्रकाश में मैं तुम्हारे दर्शन कर सकूँ !

नलिनी : (रोशनी तेज करती हुई) मैं तो रोज तुम्हें स्वप्न में देखती हूँ ।···आग भी तेज करूँ ?

प्रकाश : नही, ठीक है ! काफी अच्छी आग है ।

नलिनी : मैंने शाम से ही तुम्हारे लिए तेज कर रखी है । उनसे मैंने दोपहर से ही सिनेमा की बातें छेड़ दी । मुझे भी ले जाने को कह रहे थे । मैंने कह दिया कि मेरी इच्छा नही हो रही है । वे चले गये, सन्देहभरी आँखों से देखते हुए !

प्रकाश : सन्देहभरी ?

नलिनी : हाँ, जब से उनसे विवाह हुआ है, मैं कभी उनसे खुलकर बोली भी नहीं। वे मुझे चाहते तो बहुत हैं, लेकिन मैं अपने हृदय को क्या करूँ, प्रकाश! इसीलिए वे मुझ पर सन्देह करते हैं कि मैं किसी और से प्रेम करती हूँ। उन्हें चाहती भी नहीं। हमारे माता-पिता कभी लड़की के हृदय की बात जानने की कोशिश नहीं करते! जहाँ चाहते हैं वहाँ लड़की का विवाह कर देते हैं, गोया लड़की एक कार्ड है, जहाँ चाहा, वहाँ भेज दिया!

प्रकाश : (मुस्कराकर) विज़िटिंग कार्ड!

नलिनी : हाँ, और क्या? विज़िटिंग कार्ड न सही, क्रिसमस कार्ड सही। एक ही बात है। एक तो वे लड़की को बी० ए०, एम० ए० तक पढ़ाते हैं और जब लड़की संसार के सम्पर्क में आकर अपनी रुचि बना लेती है तो उसे एक दिन शादी के नाम से वन्···टू···थ्री···कर देते हैं।

प्रकाश : यह शादी की अच्छी परिभाषा है!

नलिनी : बिलकुल 'पैराडाइज़ लॉस्ट।' तुम आये हो तो मैं इतनी खुश हूँ प्रकाश, जैसे मुझे अपना स्वर्ग फिर मिल गया है! एम० ए० क्लास के अपने दो वर्ष कितनी अच्छी तरह बीते! उसी समय से मैंने प्रण कर लिया था कि अगर विवाह करूँगी तो सिर्फ तुम्हारे साथ! लेकिन पिताजी के सम्मान की आग में मुझे हँसते हुए ज़िन्दा रहने की सज़ा मिली। प्रकाश, तुमने तो अपना प्रण निभा लिया, संसार छोड़कर तपस्या में अपनी ज़िन्दगी सुखा डाली। मैं ऐसा नहीं कर सकी, प्रकाश! मैं क्षमा किये जाने के योग्य भी नहीं हूँ!

प्रकाश : नहीं नलिनी, ये तो संसार की परिस्थितियाँ हैं। इनमें मनुष्य को सब तरह के अनुभव होते हैं और मनुष्य को

चाहिए कि वह बिना भौंह पर शिकन लाये सब बातों को सोचे-समझे ! मेरा क्या है ? यदि संसार मे एक नवयुवक कम हो गया तो उसकी कोई हानि नही। मैं तुम्हे नही पा सका, तो कोई बात नही। तुम्हारे प्रेम के वे दिन ही मेरे लिए क्या कम हैं, जिन्हे सोच-सोच कर मैं जिन्दा रह सकता हूँ ?

नलिनी : लेकिन तुमने तो अपना बलिदान ही कर दिया, प्रकाश ?

प्रकाश : और मैं क्या करता, नलिनी ! संसार मे किसकी सभी इच्छाएँ पूरी हुआ करती है ? मैंने भी अपना दिल मजबूत बना लिया। सोचा, देखूं मुझ पर कितनी मुसीबतें आती है ? जब संसार में मुसीबतें ही मुसीबतें हैं, तो मनुष्य कब तक उनसे बच सकता है ? कभी-न-कभी तो उनके चक्र मे पडना ही होगा, अभी से सही !

नलिनी : लेकिन मुसीबतों की भी तो कोई सीमा होती है ! तुम्हारी मुसीबतों का तो अन्त ही नही दिखलायी देता !

प्रकाश : उसकी आवश्यकता भी नही है। और जब मैंने तुमसे निराश होकर देश-सेवा की तपस्या मे अपने को डाल दिया है तो अब मैं अपनी मुसीबतो का अन्त भी नही चाहता। देश की सेवा कर किसने सुख की नींद सोयी है ? चाहता हूँ कि देश के नाम पर जेल में सड़कर मर जाऊँ तो मुझे सन्तोष भी होगा कि मेरा जीवन किसी कार्य में लग सका !

नलिनी : लेकिन मैं तो ससार की आँच में इसी तरह जलती रहूँगी !

प्रकाश : तुम्हारे लिए कोई चारा नही है, नलिनी ! तुम्हे समाज की व्यवस्था रखनी चाहिए। मेरा दुर्भाग्य था कि तुम मेरी नही हो सकी, नही तो हम दोनों का

जीवन देखकर स्वर्ग-सुख को भी ईर्ष्या होती। खैर, जाने दो! यही बहुत है कि मैं कभी-कभी तुम्हारे दर्शन कर लिया करूँ।

नलिनी : लेकिन इस तरह तो तुम हमेशा जेल से बाहर नही निकल सकते।

प्रकाश : न सही। कोशिश करूँगा। सफल हो जाऊँगा तो भाग्य, नही तो तुम्हारी स्मृति ही क्या कम है? उसके साथ मैं जीवन-भर खेल सकता हूँ!

नलिनी : (विह्वल होकर) ओह, तुमने मेरे लिए बड़ा भारी त्याग किया प्रकाश! आज तुम स्वतन्त्र भी नहीं हो!

प्रकाश : जब तुम मुझसे छीन ली गयी तो स्वतन्त्रता मिलने पर क्या होता? इसीलिए जेल मे बन्द रहना मुझे बुरा नहीं मालूम हुआ, (थोड़ी देर चुप रहकर) और जब तुम मुझे नही मिली, तो संसार की कोई चीज मुझे नहीं मिली। फिर चाहे चोर की तरह रहूँ, या साहूकार की तरह, एक ही बात है।

नलिनी : प्रकाश, मेरे कारण तुम्हें इतना कष्ट हुआ! मैं मर जाऊँ तो अच्छा है।

प्रकाश : फिर एक जुर्म और मेरे सिर पर हो। अभी फरार हूँ, फिर कत्ल के मामले मे भी गिरफ्तार किया जाऊँ! और अपनी नलिनी के कत्ल के मामले मे! एँ?

नलिनी : तो मैं ही कत्ल के मामले में फँसकर अपने को खत्म कर दूँ, तो कैसा?

प्रकाश : (हँसकर) किसका कत्ल करोगी?

नलिनी : (रुकते हुए सोचकर) किसका बतलाऊँ? (एक बार ही) अपने पतिदेव का!

प्रकाश : छि:...क्या कहती हो नलिनी? क्या जीवनभर के लिए कलंककालिमा मे डूबोगी? मेरे पीछे तुम अपना संसार इस तरह पाप की छाया से काला बनाओगी?

नलिनी : पाप कहते किसे हैं ? संसार ने अपने स्वार्थ के लिए ही पाप और पुण्य के रोड़े अटकाये हैं। इनके बिना जीवन का रास्ता कितना सीधा और सुखमय होता !

प्रकाश : नलिनी, इतनी भावुक मत बनो। पाप उसे कहते हैं जिससे समाज के विकास में बाधा पड़े। तुम्हारा इतना अच्छा परिवार है। पतिदेव हैं पुलिस-इन्स्पेक्टर, सभ्य और बड़े आदमी। चैन की ज़िन्दगी। खाना-पीना, नाच-तमाशे देखना। दावत, ऐटहोम, समाज में मान। और आदमी को चाहिए क्या ? तुम तो सब तरह से सुखी हो। प्रकाश का क्या है ? एक फूल की तरह खिला और मुरझा गया ! क्या एक फूल के पीछे माली अपना बाग उजाड़ दे ? यह तो संसार का क्रम है, चलता ही रहेगा। अच्छा हाँ, कैसे हैं तुम्हारे पतिदेव ?

नलिनी : अच्छे हैं। (दीवार पर लगे हुए चित्र की ओर देखते हुए) मेरी उमर से दुगुने से भी ज्यादा—४८ वर्ष के होंगे। दूसरे विवाह में वे पहले विवाह की गलतियाँ नही दोहराना चाहते ! ऐसे लगते हैं जैसे समुद्र तूफान के बाद छोटी-छोटी लहरों में खेल रहा है। बहुत शान्त हैं। सब तरह के सुख मुझे देना चाहते हैं, लेकिन मेरा मन कुछ गिरागिरा-सा रहता है, इसलिए उन्हें हमेशा सन्देह होता रहता है कि मैं किसी और को तो प्रेम नही करती। यह और सिर्फ मेरा हृदय जानता है या जानते हैं···प्रकाश !

प्रकाश : (चित्र की ओर संकेत करते हुए) तुम दोनों की तस्वीरें तो बड़ी अच्छी हैं, जैसे जीवन के दो चित्र हैं। और मैं ? मेरी बात भूल जाओ, नलिनी ! समझ लो कि हमारे जीवन की यह फेरी खाली हो गयी। भटकते ही रहे, आपस में मिल भी नही सके। तुम्हें तो समाज और संसार की मर्यादा निबाहनी ही है। अधिक-से-

अधिक पतिदेव को सुख देने की चेष्टा करनी चाहिए।

नलिनी : मैं उन्हें क्या सुख दे सकूँगी ?

प्रकाश : क्यों नहीं, वे पुलिस-इन्स्पेक्टर हैं, मैं एक फरार हूँ। मुझ पर इनाम बोला गया है जानती हो, नलिनी, एक हज़ार ! यह एक हज़ार रुपया तुम अपने पतिदेव को आसानी से दिला सकती हो। मुझे गिरफ्तार करा दो।

नलिनी : कैसी बातें करते हो प्रकाश ? मैं तुम्हें गिरफ्तार करा दूँ ? यह असम्भव है। रात अपने एक ही चाँद को तोड़कर फेंक दे जिससे अँधेरे मे चोरों को आसानी हो जाये। क्या तुम मुझे जानते नहीं हो, प्रकाश ?

प्रकाश : जानता हूँ नलिनी ! तुमने हमेशा मेरी चिन्ता की है। स्वयं कष्ट सहकर मुझे सुख पहुंचाने की चेष्टा की है। अब तो मेरी मुसीबत की ज़िन्दगी ही है। आज यहाँ हूँ, कल दूसरी जगह चला जाऊँ ! किसी पहाड़ के अँधेरे मे, कभी नदी की लहरो पर ! अँधेरे मे छिपा रहता हूँ, जैसे कोई बुझा हुआ सितारा हो ! और तुम मेरी ओर अब भी अनिमेष नेत्रो से देख रही हो। अब मेरे लिए अधिक कष्ट उठाने की आवश्यकता नहीं। नलिनी, यही बहुत है कि कभी-कभी मुझे तुम्हारे पत्र मिल जाते है, जो मेरी ज़िन्दगी की अँधेरी रात में ध्रुवतारे का काम करते हैं।

नलिनी : मैं अपनी जान देकर भी तुम्हे सुखी करना चाहती हूँ प्रकाश ! मैं तो ऐसी मुसीबत मे हूँ कि कुछ कह नहीं सकती। तुम्हारी ओर बढ़ूँ तो पतिदेव की सन्देहभरी आँख हाथ से रिवाल्वर उठाने के लिए कह दे ! पुलिस-इन्स्पेक्टर तो हैं ही। गोली चलाना उनके लिए कोई बड़ी बात नही है। लेकिन मुझे उसकी भी चिन्ता नही है। मुझे तो चिन्ता है तुम्हारे उच्च आदर्श की, देश-सेवा की और अपने पिताजी के सम्मान के कलंकित

होने की। अनेक बार सोचती हूँ कि आत्म हत्या कर लूं, लेकिन मैं ऐसा इसलिए नही करती कि फिर मैं अपने प्रकाश को न देख सकूंगी।

प्रकाश : नही, आत्म-हत्या करना पाप होता है, नलिनी! यह बात स्वप्न मे भी मत सोचना। आत्म-हत्या तो मैं भी कर सकता था। लेकिन सच्चे मनुष्य वही हैं जो मुसीबतों का सामना करते हुए चट्टान की तरह खड़े रहे। मुसीबतो के ज्वार-भाटे तो आया ही करते हैं।

नलिनी : तुम मनुष्य-रत्न हो, प्रकाश!

प्रकाश : और तुम? यही देखो, मैं तीन महीने से फरार हूँ। इस बीच में दर्जनो पत्र मैंने तुम्हें लिखे और तुमने मुझे। यदि तुम चाहती तो मुझे आसानी से गिरफ्तार करा देती। लेकिन तुमने यह नही किया। मेरे विश्वास की इतनी बड़ी रक्षा! नलिनी, तुम देवी हो!

नलिनी : मैं देवी हूँ या दानवी, यह कौन जाने? मेरे जीवन की सबसे बड़ी विडम्बना यह है कि मैं तुम्हे चाहते हुए भी तुमसे नही मिल सकती और दाम्पत्य-जीवन की विडम्बना यह है कि पति से प्यार न करते हुए भी उनसे प्यार का अभिनय करती हूँ—उनसे विश्वास-घात करती हूँ। तुम्हारा पता जानते हुए भी मैं तुम्हे उनसे छिपाये रहती हूँ। वे बेचारे तुम्हारी वजह से परेशान हैं। रात-दिन तुम्हे खोज निकालने की चिन्ता उन्हें रहती है। समाचारपत्रो मे तुम्हारा फोटो देखकर वे रात-दिन तुम्हारी शक्ल लोगो मे खोजा करते हैं। मैं तो अपने जीवन को ही सबसे बडा धोखा समझती हूँ।

प्रकाश : अच्छी बात है, तो अब से तुम अपने जीवन की विडम्बना का अन्त कर दो। मैं तुमसे न मिलूं और तुम मेरी बात मत सोचो। समझ लो कि कॉलेज-जीवन के वे

दिन सपने थे और वैवाहिक जीवन का सूरज निकलने पर वे सब समाप्त हो गये ! तुम अपने पतिदेव की सच्ची पत्नी बनो, नलिनी ! सब बातें भूल जाओ !

नलिनी : क्यों प्रकाश, क्या प्रेम दो बार किया जा सकता है ? तुमसे प्रेम करने के अनन्तर अब क्या मैं तुम्हें छोड़कर किसी दूसरे से प्रेम कर सकती हूँ ? बनावटी प्रेम करना प्रेम का सबसे बड़ा अपमान है। फिर जब तुम अँधेरी रातों में भटकते फिरते हो, तो सुख की नींद सोना क्या मेरे लिए सबसे बड़ा अपराध नहीं है ?

(बाहर साढ़े छः का घण्टा बजता है। नलिनी और प्रकाश चौंक पड़ते हैं।)

प्रकाश : अच्छा नलिनी ! अब जाऊँगा। (उठता है) मैं इतनी स्वतन्त्रता से बातें नहीं कर सकता। मुझे तो चारों दिशाओं में गिरफ्तारी के वारण्ट नजर आते है। हाँ, देखो अपने पतिदेव के साथ प्रेम के साथ रहना। कभी भूले-भटके मेरी याद कर सको तो कर लेना ! मेरा नया पता यह है। अब मैंने पुरानी जगह छोड़ दी है (एक कागज निकालकर देता है।) लेकिन यह पता केवल तुम्ही को मालूम रहना चाहिए। यदि किसी दूसरे व्यक्ति के हाथ में पड़ा तो वह रुपये के लोभ से मुझे किसी भी क्षण पकड़वा देगा। फिर मैं तुमसे सदा के लिए दूर हो जाऊँगा, नलिनी ! हो सके तो यह पता स्मरण कर इसे जला देना। अपने जीवन की कुछ बातें मैंने इसमें और लिख दी है। अवकाश मे पढ लेना ! मेरा नया पता है—प्रकाशचन्द्र, १५ हैमिल्टन पार्क, रामगंज। और मेरी नलिनी, अपने जीवन को···
(बाहर खट्-खट् की आवाज) ओह, अब मैं जाऊँ ! कोई आ रहा है।

नलिनी : प्रकाश···मेरे प्रकाश···तुम सुख से रहना। ओह···

प्रकाश !

[प्रकाश शीघ्रता में अपना भगवा वस्त्र उठाकर दूसरे दरवाजे से जाता है, किन्तु दाढ़ी-मूंछ भूल जाता है। नलिनी प्रकाश के जाने पर दरवाजा बन्द करती है और कागज को टेबुल के ड्रॉअर में रखती है। प्रथम दरवाजे पर जाकर पूछती है।]

नलिनी : कौन है ? (बाहर से फिर खट्-खट् की आवाज ! नलिनी दरवाजा खोलती है, एकाएक चौंककर पीछे हटती है। नलिनी के पति राजबहादुर का प्रवेश। ४८ वर्ष के व्यक्ति। बालों में सफेदी आ गयी है। पुलिस की वर्दी पहने हुए हैं। कमर मे बेल्ट जिसमें कारतूस हैं। हाथ में एक पतली छड़ी है। आते ही वे नलिनी को गहरी दृष्टि से देखते हैं।)

राज : किससे बातें हो रही थी ?

नलिनी : (अव्यवस्थित स्वर में) बातें···नही-नही, किसी से नही ! मैं किससे बातें करूँगी ? लेकिन आप बहुत जल्द सिनेमा से लौट आये ? क्या फिल्म ठीक नहीं थी ?

राज : फिल्म तो ठीक थी, लेकिन मेरी तबीयत ठीक नही थी। मैं चला आया। सोचा तुम अकेली होगी। तुम्हें बुरा लग रहा होगा। लेकिन दरवाजे पर आकर दो मिनट रुककर सुना, तो मालूम हुआ तुम किसी से बातें कर रही हो !

नलिनी : कुछ नही, थोड़ी देर के लिए ललिता आयी थी। बी० ए० मे पढ़ती है। लेकिन आप बहुत थके हुए मालूम देते है।

राज : नही, थका हुआ तो नही हूँ। लेकिन यह ललिता कौन है ? (कमरे में टहलते हैं।) अभी तक तो ललिता

का नाम सुना नही था।

नलिनी : तो क्या हरएक लडकी आपको अपना नाम सुनाती फिरे ? वह पढती है यहाँ बी० ए० मे। बडी होशियार लड़की है। बहुत 'सोशल' है। डिबेट में और ऐक्टिग में नाम कर चुकी है। ऐक्टिग तो बहुत अच्छा करती है।

राज : तुमसे भी अच्छा ?

नलिनी : (तीव्र स्वर में) कैसी बातें करते हैं आप ? मैंने आपके सामने कब ऐक्टिग किया है ? आप नहीं जानते कि आप मुझे किस तरह अपमानित कर रहे है ! और मेरे साथ ललिता को भी !

राज : मैं किसी का अपमान नही करता नलिनी ! सोच रहा हूँ ललिता के बारे मे ! (सोचते हुए) ललिता ! बी० ए० मे पढ़ती है। अच्छा, और वह ललिता अपनी दाढ़ी और मूंछ यहाँ क्यो छोड़ गयी है ?

नलिनी : कैसी दाढी-मूंछ ?

राज : यही तो, इस टेबुल पर रखी है ! (नकली दाढ़ी और मूंछ उठाते हैं।) क्या इस बीसवी सदी में बी० ए० मे पढनेवाली लड़कियों के दाढ़ी और मूंछ भी निकला करती हैं ? और वे उन्हे अपनी सुविधानुसार अलग भी निकालकर रख सकती हैं ? वाह !

नलिनी : (सँभलकर) दाढ़ी और मूंछ !···ओ···मैंने कहा न, ललिता बी० ए० में पढती है। उसके कालेज में एक नाटक होनेवाला है। उसमे उसने एक 'मेल पार्ट' लिया है। उसी मेल पार्ट का ऐक्टिग वह यहाँ कर रही थी। वह शायद दाढी और मूंछ अपने साथ लायी होगी। सोचा होगा, दाढी-मूंछ लगाकर ऐक्टिग करने मे कैसा लगता है ! (हँसकर) बड़ी विचित्र है ललिता, अपने साथ दाढ़ी और मूंछ भी ले आयी ! जैसे आज ही

ग्रैण्ड-रिहर्सल है।

राज : (सोचते हुए) क्या यह ठीक है ? हाँ, हो सकता है। लड़कियाँ भी मेल पार्ट लेती हैं। तुम्ही ठीक कह रही हो। शायद मैं ही गलती पर हूँ। माफ करना, मेरे मन में कभी-कभी बे-सिर-पैर की बातें उठ खड़ी होती है। मैं अपने मन को हजार बार समझाता हूँ, लेकिन वह बहक ही जाता है।

नलिनी : किस बात पर ?

राज : (बात उड़ाते हुए) किसी बात पर नही। बहुत काम करता हूँ। दिमाग कभी-कभी चक्कर खाने लगता है। और उस कमबख्त प्रकाश ने तो मुझे इतना परेशान कर रखा है ! एक स्थान से दूसरे स्थान मे इस तरह गायब हो जाता है जैसे इलेक्ट्रिक करेंट। इतना हिम्मती है कि बड़ी-बड़ी नदियाँ पार कर जाता है। प्राणों का मोह तो उसे है ही नही। (नलिनी मुस्कराती है।) तुम मुस्करा रही हो।

नलिनी : नही, सोच रही हूँ कि तुमने न जाने कितने आदमियो को गिरफ्तार किया है। अब दूसरे आदमियो के लिए भी तो कुछ काम रहने दो। सब काम तुम्हीं कर लोगे तो दूसरो के लिए क्या काम रहेगा ? कुछ नाश्ता लाऊँ ? (टेबिल के ड्रॉअर में से कागज निकालकर चलती है।)

राज : थोड़ी देर बाद। अभी इच्छा नही है। हाँ, कोतवाली से कागज तो नही आये ?

नलिनी : (अपने हाथ में प्रकाश के पत्र को छिपाने की चेष्टा करते हुए) नहीं, कोई नही आया।

राज : यह तुम्हारे हाथ में कैसा कागज है ?

नलिनी : कुछ नही—वह उसी ललिता के पार्ट का एक पन्ना रह गया है। मैं उसे देना भूल गयी।

राज : देखूँ, कैसा पार्ट है ?

नलिनी : वाह, आप लड़कियों का पार्ट पढ़ेंगे ? सरकारी कागज पढ़नेवाले अब लड़कियों के पार्ट पढ़ेंगे ! आप भी कैसी बातें करते हैं !

राज : क्या मैं सरकारी कागजों के सिवाय कुछ पढ़ना ही नहीं जानता ? देखूं···देखूं कैसा पार्ट है ? किस नाटक का है ?

नलिनी : होगा किसी नाटक का ! आपको इन बातों में कौन-सी दिलचस्पी है ?

राज : है, लेकिन तुम्हें दिखलाने में क्या आपत्ति है ?

नलिनी : उसने बड़ी मेहनत से लिखा होगा, कहीं खो जाये तो ?

राज : मेरे पढ़ने से खो जायेगा ? यों ही मेरी पढ़ने की तबीयत है। तुम उसे देखने क्यों नहीं देती ? (हाथ बढ़ाता है।)

नलिनी : (हाथ बढ़ाकर) नहीं-नहीं, आप उसका लिखा हुआ क्या पढ़ेंगे !

राज : क्यों, क्या लड़कियों के लिखे हुए पार्ट को देखना पाप है ? देखूंगा कि ललिता कैसा लिखती है ?

नलिनी : क्या कोई पुरस्कार देंगे ?

राज : (तीव्र स्वर में) देखो नलिनी, तुम हमेशा मेरी बातें काट देती हो। मैं वह कागज़ जरूर पढ़ूंगा और पढ़ के रहूँगा। मैं तुम्हारे सामने दिनों-दिन कोमल बनता जाता हूँ और तुम कठोर बनती जाती हो। मेरे मन में सौ बार यह बात उठी है कि तुम मुझसे ज्यादा प्रेम करती हो या मैं तुमसे ज्यादा प्रेम करता हूँ। लेकिन मुझे ऐसा जान पड़ता है कि तुम मेरा साथ नहीं देना चाहती। बोलो, दोगी वह कागज मुझे ?

नलिनी : आप बाहर के चोर-डाकुओं से बातें करके आते हैं तो आपका दिमाग खराब हो जाता है ! आप न जाने कैसी-कैसी बातें करने लगते हैं और मैं उनके अनुसार

आपसे बातें नही करती तो आप मुझ पर सन्देह करने लगते है। आप दिन-रात मेरा अपमान करते रहते हैं। मैं जहर के घूंट पीते-पीते थक गयी हूँ। किसी दिन सचमुच जहर पी लूंगी तो अपनी जिन्दगी पर मेरी मौत का कलंक लेकर नौकरी कीजिएगा! (आँखों में आँसू भर आते हैं।)

राज : (द्रवित होकर) नलिनी, मुझे माफ करो। पुलिस-डिपार्टमेंट मे काम करते-करते मेरा स्वभाव बहुत रूखा हो गया है। मैं तुम्हारे विचारों की ऊँचाई तक नहीं पहुँच सकता, नलिनी! तुम पढ़ी-लिखी विदुषी हो और मैं—तुम ठीक कहती हो—चोर और डाकुओं के बीच मे रहनेवाला एक राक्षस! तुम देवी हो! आओ मेरे पास। (उठकर समीप जाता है और नलिनी की असावधानी में वह कागज छीन लेता है।)

राज : यह रहा कागज! (नलिनी उस कागज को पाने के लिए प्रयत्न करती है, किन्तु वह असफल होती है। राजबहादुर उस कागज को एक हाथ में लेकर पढ़ता है।) प्रिये, प्रियतमे (सिर पकड़कर) ओह! यह क्या पढ़ रहा हूँ! (नलिनी को धक्का देकर दूर करता है।) ओह, यह पार्ट है, ललिता का पार्ट है! धोखेबाज, मक्कार!

नलिनी : देखिए, आप किसी स्त्री का पत्र नही पढ सकते। वह ललिता का पत्र है। उसके किसी प्रेमी ने लिखा है! वह पत्र मुझे दीजिए, दीजिए! (आगे बढती है।)

राज : (हटकर) वह प्रेमी ललिता का है या तुम्हारा? ओह! मैं अभी तक कितना मूर्ख रहा! बेवकूफ बनकर तुम्हारी बातें ध्यान से सुनता रहा।

नलिनी : (बीच ही में) देखिए, वह पत्र आप न पढ़िए। बेचारी ललिता कही की न रहेगी। उसके सम्मान की रक्षा

करना आपका परम कर्त्तव्य है। आपको मेरी बात माननी होगी, मैं कहती हूँ।

राज : बहुत मान चुका। अब तुम्हारी मीठी-मीठी चालबाजियों में नहीं आ सकूंगा। मुझे अपनी वेवकूफी पर खुद शर्म आती है कि पुलिस डिपार्टमेंट में रहकर मैं तुम्हारी बातों में कितना विश्वास करता रहा। लेकिन•••कौन मर्द औरत की बातों मे विश्वास न करे? ओह, मैं मर्द होकर तुम्हारी स्त्री बनकर रहा! स्त्री की स्त्री बनकर रहा! धिक्कार है मुझे!

नलिनी : देखिए, मैं आपके हाथ जोडती हूँ। वह पत्र आप न पढ़ें। मैं आपकी दासी हूँ, स्त्री हूँ। आप तो मेरे स्वामी हैं, प्रियतम हैं। लेकिन यह सभ्यता के खिलाफ है कि आप गैर स्त्री का पत्र पढ़ें।

राज : गैर स्त्री? तुम गैर स्त्री हो! हाँ, हाँ। अभी तक मैं अन्धा था। मै समझता रहा कि नलिनी मेरी स्त्री है। अब समझ सका कि वह किसी दूसरे की स्त्री है, जो उसका प्रियतम है। मैंने तुझसे व्यर्थ विवाह किया। जानते हुए कि मैं अड़तालीस वर्ष का हूँ। मैंने अट्ठारह वर्ष की लड़की से विवाह किया। किन्तु मैं क्या जानता था कि अड़तालीस और अट्ठारह में उजेले और अँधेरे की दूरी है।

नलिनी : आप कैसी बातें करते हैं, प्रियतम! आप मेरे लिए देवता से भी बढकर हैं। मैं आपके चरणों की दासी!

राज : चुप रहो! नलिनी, ये सुनहले-सपने बहुत देख चुका। अब और देखने की ताकत नही है। सच है एक बुड्ढे की युवती स्त्री कब तक सच्ची रह सकती है?

नलिनी : देखिए आप स्त्री-जाति का अपमान कर रहे है!

राज : मैं नही कर रहा हूँ। यह पत्र कर रहा है!, देवी, ओह मै देवी शब्द को कलंकित कर रहा हूँ। दानवी, हाँ

दानवी ! मेरे खून को शर्बत बनाकर पीनेवाली, दानवी ! बोलो दानवी जी ! तुम पतिव्रता हो ?

नलिनी . आप कैसी बातें कर रहे हैं ?

राज : चुप रहो । तुम इसीलिए यह पत्र छिपा रही थी। मैंने इस पत्र मे देख लिया है कि 'प्रिये नलिनी' भी लिखा हुआ है । यह ललिता का पार्ट है ! झूठ, मक्कार ! यह ललिता का पार्ट है ! और नाटक तुम मुझसे कर रही हो ! बोलो, यह किसका पत्र है ?

नलिनी . (क्षणभर शान्ति से रुककर) आप पढ सकते है।

राज हाँ, मै इसे पढूंगा और अवश्य पढूंगा । लेकिन तुम इस पत्र को छीन नही सकती। (रिवाल्वर निकालता है।) वही खडी रहो । अगर एक कदम भी आगे बढी तो यह रिवाल्वर अपना काम करेगा ।(पत्र खोलता है और सरसरी निगाह से पढ़ता है ।) ओह ! प्रकाश··· वही प्रकाश तुम्हारा प्रेमी है । नीच, नारकी ! और यह स्त्री, पुलिस ऑफिसर की पत्नी होकर चोर और डाकुओ से प्रेम करे ?

नलिनी : (दृढ़ होकर) प्रकाश चोर और डाकू नही है, वह देश-भक्त है, देवता है ।

राज · और तुम उसकी देवी हो ! निर्लज्ज, मेरी स्त्री होते हुए तुम्हे शर्म नही आयी ! कहाँ है वह ? (स्मरण कर) ओह, वही छिपकर आया था ! उसी की यह दाढ़ी-मूंछ है ! मुझे सिनेमा भेजने का यही राज था ! मेरे चले जाने पर अपने प्रेमी से बातें ? कहाँ है वह ? मैं उसकी खोज में परेशान होऊँ और वह मेरे घर मे ही मौजूद हो और मेरी स्त्री मे प्रेम करे···ओफ···अब नही सह सकता ! बोलो, वह कहाँ है ?

नलिनी : (दृढ़ता से) मैं नहीं जानती ।

राज : उससे अभी कुछ मिनट पहले बातें कर चुकी हैं और

आप उसे नही जानती ? बोलिए श्रीमतीजी, मुझे प्रकाश का पता दीजिए··· (हँसकर) ओह ! और एक हजार रुपये का पुरस्कार ! जल्दी कीजिए···जल्दी कीजिए, मेरे पास समय नही है ।

नलिनी : आप उसे नही पा सकते ।

राज : (तीव्र दृष्टि से देखते हुए) यह बात ? तो फिर श्रीमती जी, आप भी उसे नही पा सकती। सीधी खड़ी होइए ! मैं ऐसी दुराचारिणी स्त्री को संसार मे नही रहने दूँगा। देखा जायगा बाद मे जो होगा ! कहिए, आप तैयार हैं मरने के लिए ?

नलिनी : आपके हाथ से मरने में मेरा सौभाग्य है !

राज : ओहो ! पतिव्रताजी ! मेरे हाथ से मरने मे आपका सौभाग्य है ! ठीक है, मैं आपको यह सौभाग्य दूँगा। लेकिन इतनी सुन्दर स्त्री को मैं एक बार मे नही मार सकता ! बोलिए आपकी अन्तिम इच्छा क्या है ?

[नलिनी सिसक-सिसककर रोने लगती है।]

राज : मैं इस रोने से पिघल नही सकता, श्रीमतीजी ! ललिता से आप अच्छा अभिनय कर सकती हैं, यह पहले ही मैं जानता था। देखिए, रोते-रोते मरना अच्छी बात नही है। स्वर्ग की देवियाँ या नरक की दानवियाँ आपका स्वागत करेंगी तो आपकी आँखो में आँसू अच्छे नही लगेंगे ! चुप होइए ! बस···बस··· कल अखबार मे निकलेगा कि श्री राजबहादुर ने अपनी स्त्री का खून किया ! ···या श्री राजबहादुर की स्त्री ने अपनी आत्म-हत्या की, जो कुछ भी हो। लेकिन मैं चाहता हूँ कि आपकी लाश की आँखो में आँसू के कतरे न उलझे हो। अगर आपकी आँखों मे आँसू होगे तो मैं साफ बच जाऊँगा। आपने पहले खूब रो लिया

है, फिर आत्म-हत्या की है। लेकिन अगर आपकी आँखों में आँसू न हुए तो मेरा कत्ल करना साबित हो जायेगा। इसलिए यदि आप चाहती हैं कि मैं फांसी पर लटकूं तो आप मेहरबानी करके रोना बन्द कर दीजिए। बिल्कुल बन्द कर दीजिए… (नलिनी रोना बन्द कर देती है।) बिल्कुल ठीक! आपसे मुझे यही आशा थी। अब आप सिर्फ दो बातें बतला दीजिए। एक तो अपने प्रेमी प्रकाश का पता, जिससे मैं एक हज़ार रुपया पा सकूँ। दूसरी बात यह कि अभी तक जो आपने मेरे साथ नाटक किया है, इसका राज़ क्या था? आपने साफ-साफ मुझसे क्यों नहीं कह दिया कि मैं प्रकाश को चाहती हूँ?

नलिनी : मैं दोनों बातें ही अपने मुख से नहीं बतला सकती।

राज : तो कौन बतलायेगा?

नलिनी : मैं नहीं जानती।

राज : न बतलाइए! मैं प्रकाश का पता लगा ही लूंगा और वह कभी-न-कभी जेल में जायेगा ही, सवाल सिर्फ समय का है कि कब? दूसरी बात मैं अपनी ज़िन्दगी में आसानी से भुला सकता हूँ। अच्छा अब मरने के पहले आप अपनी अन्तिम इच्छा बतलाइए! बतलाइए! वन्…टू…

नलिनी : मेरी अन्तिम इच्छा यह है कि आप प्रकाश को अवश्य पकड़ें और उसे ऐसी सजा दें कि वह जीवनभर के लिए बेकाम हो जाये। इसी अन्तिम इच्छा के साथ मैं मरना चाहती हूँ।

राज : (आश्चर्य से) अच्छा, मरते समय अपने प्रेमी से भी विश्वासघात!

नलिनी : वह मेरा प्रेमी कहाँ है? वह तो हमें धनवान् बनानेवाला एक अभागा व्यक्ति मात्र है। वह मेरे साथ पढ़ता

था। मेरी उससे जान-पहचान थी। तीन महीने पहले जब वह फरार हुआ और उस पर इनाम बोला गया, तो मैंने ऐसे मौके पर अपनी जान-पहचानवाली शतरंज की चाल चली। उससे प्रेम करने का नाटक किया और वह आज हमारे पंजे मे है। जो काम आप नही कर सके, वह मैंने कर लिया, कहिए यह मेरा आपके साथ विश्वासघात है ? उसके इसी प्रेम-पत्र में उसका पता लिखा हुआ है। पढ़िए—१५, हैमिल्टन पार्क, रामगंज। एक हज़ार रुपये आपके हैं और मेरे हैं।

राज : (पत्र पढ़कर उमंग से) वाह नलिनी ! सचमुच यह पता लिखा हुआ है—१५, हैमिल्टन पार्क, रामगंज। ओह ! मुझे क्षमा करो नलिनी, मैं समझ गया कि तुम्हारी चतुराई मेरे सब कामो से बढकर है।

नलिनी : लेकिन मैं विश्वासघातिनी हूँ, मक्कार हूँ ! (आँखों में आँसू)

राज : तुम देवी हो नलिनी, प्रथम श्रेणी की पतिव्रता। ओह ! मैंने पाप किया है। सती-साध्वी देवी का अपमान कर मुझे नरक में भी स्थान नही मिलेगा। मुझे क्षमा करो देवी, मुझे क्षमा करो ! ((हाथ जोड़ता है।)

नलिनी : आप मुझे लज्जित न कीजिए प्रियतम, मैं तो आपकी चरण-सेविका हूँ। आपने व्यर्थ ही मुझ पर सन्देह किया !

राज : उसके लिए मैं लज्जित हूँ। कहो कि मैंने तुम्हें क्षमा किया।

नलिनी : ऐसा मैं कह नही सकती, प्रियतम !

राज : ओह, तुमने मेरे गौरव के लिए इतना परिश्रम किया ! फरार व्यक्ति का पता लगा लिया ! मैं तो प्रत्येक पुलिस आफिसर से कहूँगा कि फरार हुए व्यक्ति का पता लगाने के लिए वे अपनी पत्नी से नलिनी देवी का

उदाहरण लेने को कहें। ओह, तुम कितनी समझदार हो! कितनी बुद्धिमती हो! तुम्हें पाकर मैं धन्य हो गया।

नलिनी : यह तो मेरा कर्त्तव्य था, जो मैंने सफलता से निभाया।

राज : अच्छा तो अब आज ही रामगंज चल दूं और तुम्हें एक हजार रुपया सौंप दूं! ओह मेरी नलिनी, तुम कितनी अच्छी हो, जिस तरह तुम्हारा मुख इतना सुन्दर है, उसी तरह तुम्हारी बुद्धि भी सुन्दर है। लोग कहते हैं कि कालेज मे पढने से लड़कियाँ बिगड जाती हैं। वे अहमक है, नालायक हैं। मेरी नलिनी को देखें। एम० ए० पास कर मेरे कामो मे ऐसी सहायता देती है कि रुपया और मान मेरे पैरो पर लोट रहा है!

नलिनी : यह सब आपकी कृपा है।

राज : नहीं नलिनी, प्रत्येक पुलिस ऑफिसर को एम० ए० पास लडकी से शादी करनी चाहिए। उनकी बहुत-सी मुश्किलें आसान हो जायेंगी। अच्छा, तो मैं अब चलता हूँ।

नलिनी : इतनी उतावली करने की क्या आवश्यकता है? आप थके हुए हैं। जरा आराम कीजिए। कल सुबह आप चल दीजिएगा, अभी तो प्रकाश रामगंज मे चार दिन ठहरेंगे।

राज : (सोचकर) हाँ, तुम भी ठीक कहती हो। मैं थक गया हूँ। मेरे सिर मे भी कुछ दर्द है।

नलिनी : आप अपने कपडे बदल लीजिए। मैं बिस्तर ले आती हूँ, आप थोड़ा आराम कीजिए, फिर सेकेण्ड शो हम दोनो साथ ही देखेंगे।

राज : अच्छी बात है। यह रिवाल्वर वहाँ रख दो। देखो सँभालकर रखना। गोली भरी है। बड़े रूम की टेबिल के ऊपरी ड्रॉअर में!

नलिनी : बहुत अच्छा (रिवाल्वर ले लेती है। फिर तनकर सामने खड़ी होती है।) मि० राजबहादुर ! मैं प्रकाश को प्रेम करती हूँ। एक देशभक्त को प्रेम करती हूँ। तुमने उसका पत्र छीन लिया। मैं तुमसे तुम्हारी जान छीनूँगी। बोलो ! दोनों में से कौनसी चीज प्यारी है ?

राज : (घबड़ाकर) अरे-अरे नलिनी, यह क्या ! अरे, तुम कैसी बातें करती हो ?

नलिनी : खामोश ! तुम प्रकाश का पता भी जान गये हो। पत्र अगर लौटा भी दो, तो तुम उसका पता भूल सकोगे ?

राज : अरे, तुम तो कहती थी कि यह तुम्हारी शतरंज की एक चाल थी ! क्या तुम प्रकाश से सचमुच प्रेम करती हो ?

नलिनी : एक बार नहीं सौ बार ! प्रेम विवाह का गुलाम नहीं है, मि० इन्स्पेक्टर ! बोलो, तुम प्रकाश का पता भूल सकोगे ?

राज : प्रकाश का पता···१५, हैमिल्टन पार्क···

नलिनी : चुप रहो ! जोर से मत बोलो। कोई सुन लेगा। मैं प्रकाश को गिरफ्तार नहीं करा सकती। उसके विश्वास को नहीं तोड़ सकती !

राज : और मेरे विश्वास को तोड़ सकती हो ?

नलिनी : तुमने मुझ पर विश्वास ही कब किया ? सदैव सन्देह की दृष्टि से देखते रहे ! और फिर अड़तालीस वर्ष के बूढ़े आदमी से अठारह वर्ष की लड़की प्रेम नहीं कर सकती ! आप मेरे पिता हो सकते हैं, पति नहीं, मि० इन्स्पेक्टर !

राज : नलिनी, तुम कैसी बातें करती हो ! और तुम प्रकाश को गिरफ्तार कराकर इनाम नहीं लोगी। इस इनाम को पाकर यों ही छोड़ दोगी ? मेरा पुरस्कार !

नलिनी : अब मौत ही तुम्हारा पुरस्कार है। तुम प्रकाश का

पता भूल सकोगे ? लेकिन तुम क्या भूल सकते हो ? ···मैं तुम्हें बचा नहीं सकती। तुम्हें बचाने में मैं प्रकाश को खो दूँगी। बोलो, अन्तिम समय तुम क्या चाहते हो ? वन्···टू···

राज : मैं···मैं···नलिनी···तुम कैसी···(कुर्सी से उठता है।)

नलिनी : वहीं बैठे रहो ! आगे बढ़ोगे तो गोली चला दूँगी !

राज : स्त्री अपने पुरुष को मारे !

नलिनी : मैं तो केवल कर्त्तव्य-पालन कर रही थी, लेकिन जब मेरे प्रकाश के जीवन का भय है तो उस कर्त्तव्य को समाप्त करती हूँ। वहीं बैठे रहो !

राज : दोनों हाथ ऊपर उठाते हुए (भर्राए स्वर में) अरे यह क्या नलिनी ? ओह, तुम मुझे चिल्लाने भी नहीं दे रही हो ! मैं तुम्हारा पति हूँ नलिनी ! पुरस्कार क्यों नहीं चाहिए ? मैं मर जाऊँगा। मुझे जीने दो नलिनी, मुझे पुरस्कार नहीं चाहिए।

नलिनी : यह पुरस्कार लो। (नलिनी पिस्तौल चलाना ही चाहती है कि नेपथ्य से प्रकाश आकर नलिनी का हाथ पकड़ लेता है।)

प्रकाश : सावधान नलिनी ! पहले मुझ पर गोली चलाओ !

राज : (विक्षिप्त स्वर में) ऐं, तुम कौन ?–तुम कौन हो ? कहीं प्रकाश···

प्रकाश : हाँ, मैं प्रकाश हूँ ! राजनीति के जुर्म में फरार प्रकाश !

नलिनी : प्रकाश ! मत रोको मुझे ! मुझे मत रोको ! तुम्हारी जान खतरे में है !

प्रकाश : कोई परवाह नहीं, नलिनी ! पिस्तौल मुझे दो ! मुझे दो पिस्तौल !

[प्रकाश नलिनी के हाथों से पिस्तौल लेता है। नलिनी अपना हाथ ढीला कर

देती है। नलिनी अवाक् होकर प्रकाश की ओर देखती है।]

प्रकाश : मि० राजबहादुर ! आप मुझे गिरफ्तार कर सकते हैं।

नलिनी : (चौंककर) नहीं-नहीं, आप गिरफ्तार नहीं हो सकेंगे ! मुझे गिरफ्तार करो ! मैंने एक फरार व्यक्ति को घर में जगह दी, उसकी रक्षा की। (राजबहादुर से) आप मुझे गिरफ्तार कीजिए ! इन्हें छोड़ दीजिए ! छोड़ दीजिए !

राज : (चैतन्य होकर रुकते हुए स्वर में) प्रकाश ! राजद्रोह के जुर्म में फरार प्रकाश तुम हो ? मैं स्वप्न तो नहीं देख रहा ! तुम…तुम पुलिसवालों की जान भी ले सकते हो और उन्हे बचा भी सकते हो ?

प्रकाश : मैं अन्याय नहीं देख सकता। मैं यह सहन नहीं कर सकता कि एक पत्नी अपने पति को गोली से मार दे, खासकर उस वक्त जब गोली का शिकार मुझे होना चाहिए ! आप देखते क्या है ? फरार कैदी आपके सामने है और आप गिरफ्तार नहीं करते ?

राज : मैं प्रकाश को गिरफ्तार करूँ ? तुम क्या कहती हो नलिनी ?

नलिनी : मुझे गिरफ्तार कर लीजिए ! उन्हें छोड़ दीजिए !

राज : तुम्हे ? तुम्हें गिरफ्तार करके क्या मैं उन्हें छोड़ सकता हूँ ?

नलिनी : तो उनके साथ मुझे भी गिरफ्तार कर लीजिए ! मैं भीख माँगती हूँ !

राज : (दृढ़ता से) मैं किसी को गिरफ्तार नहीं करूँगा।

नलिनी : (प्रसन्नता से विह्वल होकर) ओह, आप कितने अच्छे है ! कितने अच्छे हैं !

राज : (शून्य दृष्टि से) राजनीति के जुर्म मे फरार कैदी प्रकाश ! जो मरे हुए को जिन्दा कर दे ! (प्रकाश से)

तुम भी मुझ पर गोली चला सकते हो ! तुम्हारे हाथ मे रिवाल्वर है।

प्रकाश : मैं अपने ही भाई को मारकर अपना देश आज़ाद नहीं कर सकता। (पिस्तौल फेंक देता है।)

राज : क्या कहा ? अपने ही भाई को मारकर ! और मैंने अपने कितने निहत्थे भाइयो पर गोलियाँ चलायी हैं। उन्हें पेट के बल जमीन पर रेंगने को कहा है। उन्हें भेड़-बकरियों की तरह हलाल किया है ! कितनी बहनों के हाथ से झण्डे छीनकर उन्हे खून से नहलाया है ! उनके सिरो पर जूतों से ठोकरें लगायी हैं। यह सब किसलिए ? इसलिए कि मैं एक विदेशी सरकार का नमकहलाल नौकर कहलाऊँ ! अपने भाइयो के खून से विदेशी झण्डे को और भी लाल कर दूँ ! (रुककर गहरी साँस लेकर) और एक तुम हो कि तुमने अपने भाइयो के दर्द में अपनी आह मिला दी है। तुमने किसानो की झोपड़ियों में देश भक्ति के महल खड़े किये हैं। बहनों की इज्जत के लिए अपने सर पर डण्डो की चोटें सही हैं। किसे गिरफ्तार होना चाहिए—तुम्हे या मुझे ?

प्रकाश : मुझे, क्योंकि मुझे पुलिसवालों को इनाम दिलाकर अपने भाइयों के पैसो से उन्हें धनवान् बनाना है !

राज : तो फिर अब यहाँ पुलिसवाला कौन है ? पुलिस इन्स्पेक्टर राजबहादुर तो नलिनी के रिवाल्वर में मर गया ! तुमने मुझे जिन्दा किया है ! प्रकाश ! तुमने मुझे जिन्दा किया है ! अब यह राजबहादुर पुलिस इन्स्पेक्टर नही है ! यह देशभक्त भाइयों के साथ देश की आज़ादी पर मरनेवाला राजबहादुर है। मैं तुम्हारे साथ हूँ, देश की आज़ादी के लिए ! भाइयों और बहनों की इज्जत के लिए ! मैं राजबहादुर—देश की स्वतन्त्रता मे मेरा भी खून बहे। तुम नलिनी के साथ

विवाह करो ! मैं तुम्हारा काम पूरा करूँगा।

प्रकाश : देशभक्त बलिवेदी से विवाह करता है, स्त्री से नहीं। स्त्री तो उसकी शक्ति है, दुर्गा है !

नलिनी : शक्ति और दुर्गा ! स्त्री तो जन्म से ही दुर्गा और शक्ति का अवतार है ! देश की स्वतन्त्रता मे सबसे प्रथम पंक्ति स्त्रियों की ही होगी। वे ही विजयगीत गाकर शत्रुओं के हाथों से देश की स्वतन्त्रता छीन लेती हैं।

राज : तब चलो हम तीनों देश की स्वतन्त्रता मे अपने जीवन का सर्वस्व दान करें।

प्रकाश : राजबहादुर ! मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ !

[श्यामनारायण का प्रवेश]

श्याम : नलिनी ! तुम कोमल होकर भी कठोर हो और राज-बहादुर ! तुम कठोर होकर भी कोमल हो। और प्रकाश ! तुम कठोर और कोमल दोनों ही हो। आज हमारा यह रिहर्सल देश के सभी पुलिसवालो के लिए सच बन जाये ! जयहिन्द !

[परदा गिरता है]

आशीर्वाद

पात्र-परिचय

(प्रवेशानुसार)

राजेश कुमार

सरोज—राजेश कुमार की पत्नी

रमेश—राजेश कुमार का क्लर्क

आशीर्वाद

[दृश्य—प्रयाग-स्थित बंगले में राजेश कुमार का ड्राइंग-रूम। अत्यन्त सुरुचि के साथ उसकी सजावट की गयी है। दीवारों पर प्राकृतिक दृश्यों के सुन्दर चित्र हैं। सामने सन् १९४७ का कैलेण्डर है जिसमें दिसम्बर मास का पृष्ठ दीख रहा है। कैलेण्डर के बगल में एक घड़ी है जिसमें सन्ध्या के चार बजे हैं। ज़मीन पर चैक-डिज़ाइन का कारपेट बिछा हुआ है। कमरे के बीचोबीच एक गोल टेबल है जिसके दो ओर कुर्सियां हैं। टेबल पर रेशमी क्लाथ। उस पर एक चौड़ा फूल-दान है, जिसमें गुलाब के फूल पत्तियों सहित काफी घने लगे हुए हैं। कुर्सियों पर कुशन। कमरे के दोनों ओर दो दर-वाजे हैं। दाहिना दरवाजा बाहर जाने के लिए और बायां अन्दर आने के लिए है। दरवाज़ों पर हरी जाली के परदे हैं। कमरे के बीचोबीच पिछली दीवार में

तुम्हारे दिल में भी हलचल है।

सरोज : तो उसमें बुराई क्या हो गयी ? मैं भी तो इन्सान हूँ! कोई अच्छी बात होते समय हलचल होना स्वाभाविक है।

राजेश कुमार : लेकिन अच्छी बात हो जाये तभी तो बात है।

सरोज : बात अच्छी क्यों नहीं होगी ? मैंने मनौती जो मान रखी है।

राजेश कुमार : अच्छा ! बात यहाँ तक पहुँच गयी ? किसकी मनौती मानी है ?

सरोज : ये बातें बतलायी नहीं जाती।

राजेश कुमार : न बतलाओ। मेरी तो इस मामले में आशा ही टूट चली है !

[आरामकुर्सी पर निराशा से बैठ जाते हैं।]

सरोज : क्यों ?

राजेश कुमार : (हाथ झुलाकर) अरे, जब अभी तक कुछ नहीं हुआ तो आगे क्या होगा ! दो महीनों से तो प्रतीक्षा कर रहा हूँ ! प्रत्येक दिन आशा से उठता हूँ और निराशा से सो जाता हूँ। निराश होते-होते दिल ही बैठ गया है। अब आशा करना भी बुरा मालूम होता है !

सरोज : इसीलिए तो आज शायद ऑफिस नहीं गये।

राजेश कुमार : (उठकर) फिर तुम वही बात लेके बैठ गयी ! बात यह है कि निर्णय की तारीख कल ही थी यानी... (कैलेण्डर की ओर देखकर) १५ दिसम्बर। तो आज मुझे खबर मिल जानी चाहिए। सुबह से इन्तज़ार कर रहा हूँ कि तार का चपरासी अब आता है, तब आता है। लेकिन न तार है, न चपरासी। मैंने सोचा, ऑफिस में भी मन नहीं लगेगा। फिजूल लोग आवाज़ें कसेंगे। इशारेबाज़ियाँ होंगी। इससे अच्छा यही है, घर पर रहूँ, तो कोई कुछ कहेगा नहीं। घर पर ही

तार का इन्तजार करूँ।

सरोज : लेकिन आज तार का चपरासी क्या, पोस्टमैन भी नहीं आया।

राजेश कुमार : कोई साजिश तो नहीं है ? कहो तो किसी नौकर को पोस्ट ऑफिस भेज दूं।

सरोज : भेज देखिए, लेकिन अगर वहाँ भी कुछ न आया होगा तो वहाँ के लोग भी तो आपस में इशारेबाजियाँ करेंगे। मुमकिन है, मजाक के लिए किसी दूसरे का तार आपके पास भेज दें ?

राजेश कुमार : वाह, कहीं ऐसा भी हो सकता है ?

सरोज : ऐसा नहीं हो सकता तो वे लोग यही कर सकते हैं कि तार के चपरासी से कह दें कि वर्मा साहब के बँगले पर जाकर पूछ लेना कि साहब, यह तार किसका है ? तार के चपरासी का झूठमूठ दरवाजे पर उतरना क्या कम मजाक रहेगा ?

राजेश कुमार : अच्छा, तो तुम भी अपनी जबान मुझ पर माँज रही हो ?

सरोज : मैं क्यों माँजने चली ? आपने नौकर पोस्ट ऑफिस भेजने को कहा तो मैंने यह सोचा कि बात कहाँ तक बढ़ सकती है !

राजेश कुमार : कहीं अपनी सूझ पोस्ट ऑफिसवालों को न भेज देना !

सरोज : (बात पलटते हुए) जाने दीजिए, इन बातों को सोचने से फायदा ही क्या ? तार आना होगा तो आयेगा ही।

राजेश कुमार : हाँ, कल तो नतीजा निकल ही गया होगा।

सरोज : तो फिर आज तार जरूर आयेगा।

राजेश कुमार : कैसे ?

सरोज : आप ही तो कहते थे कि नतीजा निकलने के बाद तार से सूचना दी जायेगी।

राजेश कुमार : तार से सूचना जरूर दी जायेगी लेकिन उसको, जो

भाग्यशाली होगा। मगर मैं इतना भाग्यशाली न हुआ तो मेरे पास तार से सूचना क्यों आने लगी ?

[गोल टेबल की समीप की कुर्सी पर बैठते हैं।]

सरोज : लेकिन भाग्यशाली होने की सनद किसी खास आदमी के पास तो है नहीं ! आखिरकार मनुष्य ही तो भाग्यशाली हुआ करते हैं।

राजेश कुमार : शायद मैं उन भाग्यशाली मनुष्यों में न होऊं !

सरोज : भाग्य की बात न पूछिए। संसार में ऐसी-ऐसी बातें होती हैं जिनका सिर-पैर ही नहीं समझ पड़ता। जिन्दगीभर जिन्हें खाना नसीब नहीं हुआ उनका भाग्य आजकल ऐसा चमका है कि बड़े-बड़े लोग भी उनकी खुशामद करते हैं।

राजेश कुमार : मेरा भाग्य अगर ऐसा चमक सकता तो दो सौ की नौकरी पर पड़ा रहता ? आज हजार, दो हजार कमाता !

सरोज : (मुस्कराकर) शायद आज से ही भाग्य चमक जाये।

राजेश कुमार : मुझे तो आशा नहीं है।

सरोज : क्यों ?...मान लीजिए आपके नाम ही लाटरी का पहला इनाम निकल जाये, पाँच लाख। पाँच लाख में क्या नहीं हो सकता ? सारी जिन्दगी चैन से गुजर सकती है। न किसी से लेना, न किसी को देना। मुमकिन है, कल पहला इनाम आपके नाम ही निकला हो। शायद तार रास्ते में हो।

राजेश कुमार : (लापरवाही से) तार आना होता तो अभी तक आ गया होता।

सरोज : अरे, आजकल तार की कुछ न पूछो। चिट्ठी से भी गये-बीते हो गये हैं। चिट्ठी जल्दी मिल जाये, लेकिन तार न मिले। अभी उसी रोज शीला कह रही थी कि शरणार्थी कैम्प से भेजा गया तार आठ रोज बाद

मिला।

राजेश कुमार : खैर, शरणार्थी कैम्प से न आना एक बात है और बम्बई से आना दूसरी बात। लेकिन हो सकता है कि तुम्हारी बात सही हो।

सरोज : मैं कहती हूँ, सही होगी। आज कोई-न-कोई सूचना बम्बई से जरूर आयेगी।

राजेश कुमार : तुम्हें तो बड़ा विश्वास है।

सरोज : सच्ची बात पर तो विश्वास होता ही है। यह बात दूसरी है कि लाटरी के निर्णय में घण्टे, दो घण्टे की देर हो जाये।

राजेश कुमार : (सोचते हुए) हाँ, हो सकती है। लाटरी की घोषणा करने से पहले बोर्ड ऑव् डायरेक्टर्स की मीटिंग हुई हो, परिणाम सुनाया गया हो, फिर मैनेजिंग डायरेक्टर ने उस पर दस्तखत किये हों। तब भेजा हो। फिर आने में भी कुछ विलम्ब लग सकता है।

सरोज : (प्रसन्न होकर) मैं भी तो यही कह रही थी।

राजेश कुमार : (गहरी सांस लेकर) भाग्य की बात कौन जानता है?

सरोज : आप तो लाटरी की टिकट ही नहीं खरीद रहे थे।

राजेश कुमार : अरे, आजकल खाने-पीने से पैसा बचता नहीं, लाटरी का टिकट कौन खरीदे? चीजों के दाम छःगुने-अठगुने बढ़ गये हैं, लेकिन तनख्वाह उतनी ही। वार एलाउंस तो और जले पर नमक छिड़कता है। तनख्वाह का साढ़े सत्रह परसेंट! सवा सत्रह परसेंट कर देते तो सरकार का बहुत रुपया बच जाता।

सरोज : (स्वच्छन्दता से) मैं तो इन बातों पर सोचती नहीं। जैसा समय आये अगर उसके अनुसार अपने को बना लो तो फिर कोई झंझट ही नहीं होती और फिर दुनिया का काम तो चलता ही है। अगर आप लाटरी के टिकट के दस रुपये बचा ही लेते तो किन-किन

चीज़ों के खरीदने में मदद हो जाती !

राजेश कुमार : क्या मदद हो जाती ! लेकिन मैंने भी समझा कि दो महीने तक आशा के हिंडोले में झूलने के लिए दस रुपये खर्च करना बुरी बात नहीं है। खरीद लिया टिकट।

सरोज : (मुस्कराकर) और अब कहीं लाटरी मिल गयी तो ?

राजेश कुमार : (हँसकर) तो···तो फिर क्या पूछती हो, सरोज ! (उठ खड़े होते हैं) शहरभर में राजेश कुमार की धूम मच जायेगी। लोग कहेंगे कि किस्मत हो तो राजेश जैसी। लोग मुबारकबाद देने आयेंगे। दावतें होंगी, पार्टियाँ होंगी। एटहोम्स और क्या ?

सरोज : (व्यंग्य से) और मैं बैठी रहूँगी एक कोने में ?

राजेश कुमार : तुम क्यों बैठी रहोगी ? शहरभर की स्त्रियों की आँखें तुम्हारी तरफ घूरकर रह जायेंगी। तुम तो इस तरह उड़ोगी जैसे ऐरोप्लेन। (दोनों हँस पड़ते हैं।)

सरोज : देखिए, आप मज़ाक न कीजिए।

राजेश कुमार : अच्छा, सच बतलाओ सरोज ! अगर लाटरी मिल जाये तो तुम क्या करो ?

सरोज : अभी से मन की मिठाई खाने से क्या फायदा ?

राजेश कुमार : और अभी कह रही थीं कि आज कोई-न-कोई खबर बम्बई से ज़रूर आयेगी। और अब वही बात मन की मिठाई हो गयी ?

सरोज : मैं तो यों ही कह रही थी।

राजेश कुमार : मुझसे बातें आप यों ही किया करती हैं ? कहाँ स्त्री पति को हमेशा बढ़ावा देती है ? आप उसकी आशा को मन की मिठाई कहती हैं ?

सरोज : आप तो बात न जाने किस अर्थ में ले लेते हैं। मैं कह रही थी कि लाटरी मिल जाने के बाद सोचना अच्छा होगा कि क्या किया जाये। अभी से क्या कहा जा

सकता है ?

राजेश कुमार : जी, यदि पहले से सोच न रखा जाये तो रुपया ऐसे उड़ता है जैसे कण्ट्रोल का गेहूँ। पता नही चलता, कहाँ गायब हो गया।

सरोज : अच्छी बात है, पहले से सब स्कीमें बना लीजिए।

राजेश कुमार : चलो, अब मुझे कोई स्कीम नही बनानी। दिल यों ही खट्टा हो गया।

सरोज : अरे, बस, आप तो यों ही बिगड़ जाते हैं। कुछ हल्की बात की कि आप भारी बन गये। अच्छा, जाने दीजिए। पहले यह बतलाइए कि लाटरी है कुल कितने की। तब बतलाऊँगी कि उसके रुपये से क्या करूँगी।

राजेश कुमार : (उपेक्षा से) मुझे कुछ याद नहीं।

सरोज : देखिए, आप बुरा मान गये। कहिए, तो माफी माँग लूं। अब तो बतला दीजिए। शायद पहला इनाम पाँच लाख का है। है न ?

राजेश कुमार : (उसी उपेक्षा से) होगा।

सरोज : अभी तक आप बुरा माने ही हुए हैं। मैं खुद ही उसका नोटिस न देख लूंगी ? (उठकर अलमारी के ऊपरी शैल्फ से एक कागज निकालती है। उसे लेकर राजेश के समीप पहुंचते हुए) देखिए, यही तो है।

राजेश कुमार : (हँसकर) अरे, यह तो पोधा की तरकारियों का कैटलाग है। तुम भी अजीब हो!

सरोज : (उसे फेंककर) तो मैं क्या करूँ ? उसी जगह तो रखा था आपने लाटरी का कागज़ (झुँझलाकर तख्त पर बैठ जाती है।)

राजेश कुमार : (हँसते हुए) तो कैटलाग फेंक दिया ? अच्छा, मेरी गलती सही। जाने दो लाटरी के कागज को। मुझे तो सारे इनाम जबानी याद हैं। सुनो, पहला इनाम तो

पाँच लाख का है, दूसरा ढाई लाख का, तीसरा एक लाख का। फिर पचास हज़ार के चार इनाम। इसी तरह छोटे-बड़े पैंतीस इनाम हैं। कुल दस लाख की लाटरी है।

सरोज : तब तो काफी बड़ी है।

राजेश कुमार : मान लो, बीस-पच्चीस हज़ार का छोटा इनाम ही तुम्हें मिले, तो क्या करो ?

सरोज : सबसे पहले तो मन्दिर में उत्सव करना चाहिए। मैंने मनौती जो······।

राजेश कुमार : (बीच ही में) ऊँ हूँ, ले बैठी नाइनटीन्थ सैनचुरी की बात ! जो कुछ अच्छा-बुरा होता है, वह तुम्हारे भगवान् की कृपा से ही तो होता है ! खैर, मान लो, तुमने भगवान् का उत्सव ही मनाया, तो कितना खर्च होगा ? ज़्यादा-से-ज़्यादा सौ, डेढ सौ, दो सौ···बस।

सरोज : (तीक्ष्णता से) देखिए, आप भगवान् का अपमान न कीजिए।

राजेश कुमार : अच्छा बाबा, पाँच सौ सही ! बस ? अब तो अपमान नही हुआ ? लेकिन लाटरी होगी पच्चीस हज़ार की ! बाकी रुपया कहाँ जायेगा ? पच्चीस हज़ार कुछ कम रकम नही होती।

सरोज : जी, यह बात मैं नही जानती थी।

राजेश कुमार : (मुस्कराकर) अच्छा, अब बुरा मानने की आपकी बारी है।

सरोज : (अन्यमनस्कता से) बुरा मानने का मेरा हक ही क्या है ? क्या स्त्री भी पति से बुरा मान सकती है ? उसकी हैसियत ही क्या है ?

राजेश कुमार : लो, उठा लायी मनुस्मृति ! छोड़ो इन बातो को। मुझसे पूछो, मैं क्या करूँगा। बतलाऊँ ? सबसे पहले तो दूँगा दोस्तों को एक गहरी पार्टी ! बधाई देने

आयेंगे वे लोग, तो तुम्हारे हजबैण्ड की शान इसी में है कि वह एक ग्रैण्ड पार्टी दे। दूंगा। बहुत दिनों से कोई पार्टी दी भी नहीं है। इसके बाद वह सामनेवाला मकान जो बिकाऊ है न ? वह मारबल हाउस ? वह खरीदूंगा। फिर उसके चारों तरफ फूलों और तरकारियों का एक बढ़िया बाग लगाऊँगा···।

सरोज : (बीच ही में) अच्छा, इसीलिए आपने पोचा की तरकारियों का कैटलाग मँगा रखा है।

राजेश कुमार : तो इसमें बुराई क्या है ? ऐसा बढ़िया बाग लगाऊँगा कि सालभर मौसम और गैर-मौसम की तरकारियाँ मुफ्त खाओ और चाहो तो बाजार में बिकवाओ।

सरोज : (रूष्टता से) मुझे कुंजड़े की दूकान नहीं सजानी है।

राजेश कुमार : लो, तरकारी बिकवाने में मैं कुंजड़ा बन गया। अच्छी बात है, मत बिकवाना। घर की तरकारियां तो खाने दोगी ?

सरोज : अच्छी बात है। फिर बाग लगाने के बाद···।

राजेश कुमार : इसके बाद (हँसकर) कहीं तुम मुझे शेखचिल्ली न कहने लगो। लेकिन मैं सब सही बातें कह रहा हूँ··· इसके बाद···एक अच्छी-सी मोटर खरीदूंगा। (सहसा) हाँ, तुम्हें मोटर का कौनसा मॉडल पसन्द है ?

सरोज : आपकी तरकारियों के कैटलाग की तरह मेरे पास कोई कैटलाग तो है नहीं ?

राजेश कुमार : अरे, इतनी बार मोटरों पर बैठ चुकी हो तुम्हें कोई मॉडल ही पसन्द नहीं ? स्टूडीबेकर, शेव्ह, फोर्ड, बियूक, हडसन, हिन्दुस्तान टैन, मारिस, आस्टिन।

सरोज : आप तो बिलकुल मोटर-डीलर बन गये। सारी मोटरें आपके दिमाग में दौड़ रही हैं।

राजेश कुमार : मोटरें क्या दौड़ रही हैं, खयालात दौड़ रहे हैं।

सरोज : (मुस्कराकर) और अभी तक लाटरी का नतीजा नहीं निकला।

राजेश कुमार : नही निकला तो निकल आयेगा (एकाएक कौतुक से आँखें फाड़कर प्रसन्नता से) या कहो तो मैं ही निकाल लूं। निकालूं ? लो निकालता हूँ ! (पॉकेट से मुट्ठी में रुपये निकालकर एक रुपया चुनते हुए) देखो, इस रुपये को उछालकर अभी जान सकता हूँ कि लाटरी मिलेगी या नही। बोलो, क्या लेती हो ? हैड या टेल ? राजा या रुपया ? इस तरफ राजा की तस्वीर है, उस तरफ एक रुपया लिखा है।

सरोज : रुपया उछालने से भविष्य की बात मालूम हो जायेगी ?

राजेश कुमार : (दृढ़ता से) निश्चय। तार बाद में आयेगा, यह रुपया पहले बतला देगा कि लाटरी मिल गयी। अच्छा, क्या लेती हो, राजा या रुपया ? जैसे ही मैं रुपया ऊपर उछालूं, वैसे ही राजा या रुपया मे से अपनी पसन्द का शब्द कह देना। देखो, यह ऊपर गया वन्...टू...थ्री...ई।

[राजेश रुपया 'टन' शब्द से ऊपर उछालता है और सरोज बोल उठती है 'राजा, राजा, हैड' राजेश रुपया झेलने में चूक जाता है और रुपया फूलदान मे गिरता है। वह झुककर रुपया खोजने लगता है।]

राजेश कुमार : हाथ ही में नही आया रुपया, कहाँ गया ? (नीचे खोजते हैं, फिर फूलदान की ओर बढकर) अगर हैड सामने है तो समझो लाटरी मिल जायेगी। लेकिन रुपया गया कहाँ ? (गहरी दृष्टि से खोजते हैं, एकाएक चौंककर) वाह रे रुपये !

सरोज : (उत्सुकता से) क्यों, क्या हुआ ? .

राजेश कुमार : (झुंझलाकर) कम्बख्त रुपया गिरा भी तो गुलदस्ते की पत्तियों में सीधा उलझा हुआ है, न इस ओर, न उस ओर।

सरोज : तो इसका मतलब क्या हुआ ? दोनों में से कुछ भी नहीं ?

राजेश कुमार : (कन्धे उचकाकर) मैं क्या बतलाऊँ ? रुपये महाराज के सीधे विराजमान होने से तो कुछ तस्फिया नहीं हुआ। लाओ, फिर से उछालूं।

सरोज : एक ही समय मे बार-बार सगुन निकालने से वह झूठा पड जाता है।

राजेश कुमार : झूठा क्यों पड़ेगा ? अबकी बार बिलकुल सच निकलेगा। अलग उछालूंगा, जिससे वह फूलदान या और किसी चीज मे न गिरे। यह रुपया कम्बख्त मुझी से मजाक करता है। जैसे जानदार है। जान-बूझकर मुझे चिढ़ाता है।

सरोज : चिढ़ायेगा क्या ? लेकिन जिस तरह रुपया गिरा, उससे तो जान पड़ता है कि लाटरी शायद निकले ही नहीं ?

राजेश कुमार : (मुंह बनाकर) वाह, ऐसा भी कही हो सकता है ? दो महीने पहले एनाउंस हो चुका है कि लाटरी १५ दिसम्बर को निकाली जायेगी। कल तो शायद वह निकल भी चुकी होगी। तार आ रहा होगा।

सरोज : ईश्वर जाने !

राजेश कुमार : ईश्वर क्या जाने, मैं जानता हूँ ! अच्छा तो अबकी बार इसे ठीक उछालूंगा। समझकर बोलना, मैं इधर अलग कोने में उछालता हूँ जिससे कहीं उलझ न सके। (कोने की ओर बढ़ते हुए) बोलो हैड या टेल, राजा या रुपया ? यह रुपया उछला वन्…टू…।

[थ्री कहने के पूर्व ही बाहर से आवाज आती है।]

आवाज : तार ले जाइए, साहब !

सरोज : (चौंककर चीखते हुए) ता···र !

राजेश कुमार : (प्रसन्नता मिली घबराहट से) ता···र ?

आवाज : आपका तार है, साहब !

राजेश कुमार : (टूटते स्वर में) मिल···गयी···लाटरी !

[दरवाजे की ओर शीघ्रता से जाते हैं।]

सरोज : (उल्लास से) मिल गयी ! मिल गयी !

[दरवाजे की ओर आतुरता से बढ़ जाती है।]

राजेश कुमार : (तार लेकर फौरन अन्दर आते हुए) आखिर आ ही गया तार ! (कांपते हुए हाथों से लिफाफा फाड़ते हुए) बहुत इन्तजार कराया कम्बख्त ने ! गुड हैवेंस !

आवाज : साहब ! दस्तखत तो कर दीजिए।

राजेश कुमार : (लिफाफा फाड़ते हुए) क्या ?

आवाज : दस्तखत, साहब !

राजेश कुमार : (उतावली से) सरोज ! तुम कर दो।

सरोज : लाओ। (दरवाजे की ओर बढ़ जाती है। तार का कागज हाथ में लेकर) क्या नम्बर है ?

आवाज : सतासी।

सरोज : (देखते हुए) कहाँ है सतासी ? यह है।

[शीघ्रता से दस्तखत कर कागज तार वाले को देती है। तारवाला 'सलाम, साहब' बोलता है लेकिन किसी को सलाम लेने की फुर्सत नहीं है। शीघ्रता से सरोज राजेश के समीप आ जाती है। तार का कागज लिफाफे में चिपक जाने के कारण निकालने में उलझन होती है। राजेश के हाथ कांप रहे हैं। आखिर वे तार निकालकर खोलते हैं।]

सरोज : (उत्साह से) कितने की मिली लाटरी ?

[राजेश तार पढ़ते ही रहते हैं।]

सरोज : बतलाइए न, पाँच लाख की या ढाई लाख की ?

[राजेश दाँत पीसकर क्रुद्धता से तार जमीन पर फेंककर उसे पैरों से कुचल देता है।]

सरोज : (घबराहट से) अरे यह क्या ? यह क्या ?

[राजेश दाँत पीसता हुआ कुर्सी पर बैठ जाता है।]

सरोज : क्या लाटरी नहीं मिली ? बात क्या है ?

राजेश कुमार : (गुस्से से साँस छोड़ता हुआ) नॉनसेन्स !

सरोज : (कुतूहल-मिश्रित दुःख से) नॉनसेन्स, क्या लिखा है तार में ? मैं तो अंग्रेजी जानती नहीं, नहीं तो मैं ही पढ लेती ! (तार उठाती है।)

राजेश कुमार : (जैसे सरोज की बात न सुनते हुए, अपने ही आप) अच्छी किस्मत है ! खूब मौका देखा !

सरोज : आखिर कुछ बतलाइएगा, कैसा तार है ?

राजेश कुमार : (तीव्रता से) मेरा सर है और क्या है !

सरोज : (आश्चर्य से) मेरा सर ?

राजेश कुमार : और क्या ? मिस्टर मुसद्दीलाल का तार है कि उनका ट्रान्सफर हो गया।

सरोज : ट्रान्सफर ? कहाँ ?

राजेश कुमार : जहन्नुम, और कहाँ ! इसी मौके पर तार भेजना था ! यहाँ मैं बैठा हूँ दूसरी आशा में, आप तार भेज रहे है कि ट्रान्सफर हो गया। अच्छा हो गया। दुनिया से ट्रान्सफर हो जाता तो और अच्छा था !

सरोज : (पश्चाताप के स्वर में) मैं तो समझी थी कि लाटरी मिल गयी !

राजेश कुमार : (झुंझलाहट से) मिल जाने में शक क्या था ? अगर

ये महाशय मुसद्दीलाल न होते या इनका ट्रान्सफर न होता। ट्रान्सफर हो गया! अच्छा हो गया! मैं क्या करूँ? खुद मर जाऊँ या मार डालूँ? जनाब आज ही तार देने बैठे हैं। कल दे दिया होता या चार दिन बाद दे देते! आज ही उनकी लंका जली जाती थी जो खामखा मेरी खुशी में आग लगा दी? जनाब टेलीग्राम दे रहे हैं कि मेरा ट्रान्सफर हो गया! सर नहीं फूट गया! 'आइ विश दैट गुड हैव बीन' (कुछ ठहरकर) मैं जानता हूँ, कम्बख्त किस्मत ही मुझसे मजाक कर रही है।

[बैठकर हथेली पर सिर टेक लेते हैं।]

सरोज : (सहानुभूति से) सचमुच क्या कहा जाये?

राजेश कुमार : कुछ नहीं। मुझे इसी तरह रोते-झीकते जीना है। कभी भाग्य की आजमाइश करो, तो यार लोग बीच मे अडगा डाल देते हैं। कहीं ट्रान्सफर हो गया, कहीं यह हो गया, कहीं वह हो गया। दोस्त मुसीबत मे मदद करते हैं, ये उल्टी मुसीबतें ढाते हैं। किस्मत ही उलट गयी है, और क्या?

सरोज : चलिए जाने दीजिए! कोई दूसरा तार आ जायेगा।

राजेश कुमार : (अशान्ति से) ईश्वर न करे, कोई दूसरा तार आये! आयेगा तो कोई साहब लिखेंगे कि उनका हार्ट फेल हो गया! सचमुच ही फेल हो जाये तो अच्छा है!

सरोज : ईश्वर न करे, कही ऐसा हो। आप तो छोटी-सी बात पर नाराज हो उठते हैं।

राजेश कुमार : (तड़पकर) यह छोटी बात है, सरोज! यहाँ मेरी पाँच लाख की बाजी लगी हुई है। तुम्हारे लिए छोटी-सी बात है! तुम क्या समझो इसे?

सरोज : (शान्ति से) अच्छी बात है। मैं कुछ नही समझती। लेकिन आपके दोस्त मिस्टर मुसद्दीलाल को क्या पता

था कि उनका तार ऐसे वक्त पहुँचेगा जब आप पाँच लाख का इन्तजार कर रहे होंगे ? उनको तो पता भी न होगा कि आपने लाटरी का टिकट खरीदा है ?

राजेश कुमार : (तीव्रता से) तो क्या मैं लाटरी के टिकट का डंका पीटता फिरूँ ? अखबारों में छपा दूँ कि मैंने लाटरी का टिकट खरीदा है ? दोस्त लोग इस बात को नोट कर लें। अच्छी बात है। अब से यही करूँगा। डंका पीटकर लाटरी की टिकट खरीदूँगा।

सरोज : आप तो बहुत जल्दी...

राजेश कुमार : सुनो, सरोज ! आज से मैं कसम खाता हूँ कि रुपया किसी भूखे-प्यासे को दे दूँगा, लेकिन लाटरी का टिकट नही खरीदूँगा। कभी नही खरीदूँगा।

सरोज : यह तो और भी अच्छा होगा। किसी भूखे-प्यासे का पेट भरेगा।

राजेश कुमार : और क्या ? तुम भी तो यही चाहती हो कि मेरी हालत ऐसी ही भिखमंगे जैसी बनी रहे।

सरोज : आपकी यह हालत भिखमंगे जैसी है ?

राजेश कुमार : नही है, तो हो जायेगी। आज नही कल। न जाने किसका मुँह देखकर उठा था।

सरोज : खैर, अब शान्त हो जाइए। काफी देर हो गयी है। (घड़ी की ओर दृष्टि) शाम हो चली है। आप थोडा नाश्ता कर लीजिए।

राजेश कुमार : मुझे कुछ नही करना—नाश्ता-वाश्ता।

सरोज : तो क्या लाटरी के पीछे आप खाना-पीना छोड़ देंगे ?

राजेश कुमार : खाना-पीना क्यों छोड़ दूँगा ? उसमे भी मेरे लिए जहर निकल आयेगा !

सरोज : आप कैसी बातें करते हैं ? क्या मैं आपके खाने-पीने में जहर मिला दूँगी ?

राजेश कुमार : मुसद्दीलाल ने तार मे कौन जहर मिला दिया था

लेकिन हो गया मेरे लिए।

सरोज : (अन्यमनस्कता से) ठीक है, तो मैं अब कुछ बोलूंगी भी नहीं।

[बाहर दरवाज़े पर आवाज़ होती है।]

सरोज : देखिए, कोई बाहर आया है?

राजेश कुमार : अब मैं किसी से नहीं मिलना चाहता।

सरोज : मुमकिन है, कोई दूसरा तारवाला हो।

राजेश कुमार : (तीखे स्वर में) तुम फिर जले पर नमक छिड़कती हो, सरोज! किस्मत की तरह तुम भी मुझसे मज़ाक करती हो!

सरोज : मैं आपसे क्यों मज़ाक करूंगी? आज तो मेरा बोलना भी मुश्किल हो रहा है!

[बाहर दरवाज़े पर फिर आवाज़ होती है।]

राजेश कुमार : (झुंझलाकर) आज चपरासी भी ऑफिस से नहीं आया जो जाकर देखे कि बाहर कौन है? (ज़ोर से) कौन है?

आवाज़ : मैं हूँ, रमेशचन्द्र।

राजेश कुमार : अच्छा, क्लर्क! (सरोज से) सरोज! रमेश आया है। (सरोज भीतर चली जाती है।)

[रमेशचन्द्र का प्रवेश। वह दुबला-पतला युवक है। आयु छब्बीस वर्ष के लगभग। खाकी रंग का बन्द गले का कोट और सफेद पाजामा पहने हुए है। सिर पर किश्तीनुमा टोपी, पैर में चप्पल। उसके हाथ में कुछ कागज़ और लिफाफे हैं। वह आकर राजेश को नमस्कार करता है।]

राजेश कुमार : क्या बात है, रमेश?

रमेश : जी, आज आप ऑफिस नहीं पहुँच सके। यह आपकी डाक है। मैंने सोचा, घर जाते समय आपकी यह डाक पहुँचा दूँ। मुमकिन है, कोई जरूरी चिट्ठी हो !

राजेश कुमार : ठीक किया। रख दो मेज पर। (रमेश डाक मेज पर रखता है।) सब पेपर्स डिसपैच हो गये ?

रमेश : (नम्रता से) जी।

राजेश कुमार : और कोई जरूरी बात ?

रमेश : जी नहीं !

राजेश कुमार : तो तुम जा सकते हो।

रमेश : जी। (नमस्कार करके प्रस्थान)

[राजेश कुछ क्षणों तक शून्य में देखता रहता है। फिर गहरी साँस लेकर डाक हाथ में लेता है।]

राजेश कुमार : (डाक देखते हुए) सरोज !

सरोज : (नेपथ्य से) कहिए।

राजेश कुमार : तुम्हारी एक चिट्ठी है।

सरोज : (आकर) कहाँ की है ?

राजेश कुमार : मैं तो तुम्हारे पत्र कभी खोलता नहीं। होगी तुम्हारी किसी सहेली की !

सरोज : क्या पोस्टमैन आया था ?

राजेश कुमार : नहीं, रमेश डाक दे गया है।

[सरोज पत्र लेती है। डाक के पत्र देखते हुए एकाएक राजेश चौंक उठता है।]

राजेश कुमार : (विह्वलता से) अरे, यह पत्र तो बम्बई से आया है। लाटरी-विभाग की ओर से।

सरोज : (प्रसन्नता से) लाटरी-विभाग की ओर से !

राजेश कुमार : हाँ, मुहर तो वहीं की है—ऑल इण्डिया लाटरी ब्यूरो। देखो, इस कोने में सील है।

सरोज : (आतुरता से) खोलिए, क्या लिखा हुआ है ? क्या

कोई लाटरी ?

राजेश कुमार : (विकल और उद्भ्रान्त होकर टूटे स्वर मे) लाटरी··· एँ···लाटरी तो नहीं हो सकती···एँ···लाटरी ! (पत्र खोलने लगता है। हाथ कांपते हैं।)

सरोज : क्यों ? कोई छोटी-मोटी लाटरी तो हो सकती है। आप ही तो कहते थे कि बड़ी लाटरी की सूचना तार से दी जायेगी और छोटी लाटरी की चिट्ठी से !

राजेश कुमार . (अस्फुट शब्दों में) हाँ···छोटी लाटरी···की सूचना··· चिट्ठी मे···तो लो फिर···तुम्ही खोलो। न जाने··· मेरा···दिल कैसा हो रहा है···कही कुछ···न निकला···तो एँ, तुम्ही खोलो···

सरोज : लाइए···लाइए मैं ही खोलूं। (राजेश के हाथों से पत्र ले लेती है।)

राजेश कुमार : हाँ, मेरा दिल···न जाने···कैसा हो·· रहा है ! जल्दी खोलो···जरा जोर से पढ़ना।

[सरोज शीघ्रता से पत्र खोलकर पढ़ती है। राजेश स्तब्ध होकर सुनता है।]

सरोज : यह रहा पत्र ! हिन्दी ही मे है—

महानुभाव,

आप जानते हैं कि साम्प्रदायिक आग मे पजाब झुलस गया है। वहाँ करोड़ों की सम्पत्ति का विनाश हो गया है। जनता त्राहि-त्राहि कर उठी है। जिनके पास लाखो की सम्पत्ति थी वे दानो-दानो के मुहताज हो गये है। उनके पास न खाने को अन्न है और न शरीर ढकने को वस्त्र। ससार के इतिहास मे इतनी भयानक दुर्घटना कभी नही घटी। हमारे बोर्ड ऑव् डायरेक्टर्स ने यह निश्चय किया है कि लाटरी के लिए जितना रुपया एकत्रित हुआ है वह पंजाब के शरणार्थियों की सहायता के लिए भारत सरकार की सेवा में भेज दिया

जाये। यदि आप इस निश्चय से सहमत नहीं हैं तो कृपया लौटती डाक से हमें सूचित करें, आपके टिकट का रुपया आपकी सेवा में तुरन्त भेज दिया जायेगा। आशा है, आप देश के इस सकट-काल में सहायक होंगे। आपको इस सम्बन्ध में जो असुविधा हुई हो, उसके लिए हम सविनय क्षमा चाहते हैं।

भवदीय,
जगदीशचन्द्र जौहरी
मैनेजिंग डायरेक्टर,
ऑल इण्डिया लाटरी ब्यूरो, बम्बई १.

[कुछ क्षण तक दोनों मौन रहते हैं।]

सरोज : (ठण्डी साँस लेकर) आखीर में यह नतीजा निकला !

राजेश कुमार : (विमूढ़ की भाँति) हूँ !

सरोज : मैं तो तारीफ करूँगी लाटरीवालों की कि अच्छे काम में रुपया लगाया है—शरणार्थियों की रक्षा में।

राजेश कुमार : ठीक है। (ऊपर की ओर अन्यमनस्क दृष्टि) उछालने पर कम्बख्त रुपया भी पत्तियों में सीधा उलझकर रह गया था। न हैड, न टेल। उसने पहले ही डंका पीट दिया था कि लाटरी नहीं मिलने की।

सरोज : तो आपको लाटरी न मिलने का कोई दुःख तो नहीं है ?

राजेश कुमार : क्या दुःख होगा ? मुझे नहीं मिली तो और किसी को भी तो नहीं मिली !

सरोज : हाँ, यही सन्तोष क्या कम है ? फिर शरणार्थियों की सेवा इस समय हमारा पहला कर्तव्य है।

राजेश कुमार : अजीब बात तो यह है कि देश पर विपत्ति भी इसी समय आयी। खूब मौका देखा !

सरोज : यह हमारे-आपके भाग्य की बात नहीं, सारे देश के भाग्य की बात है। इसके लिए कोई क्या करे ?

राजेश कुमार : हाँ, यही कहना पड़ता है।

सरोज : तब तो मेरी राय है कि लाटरीवालों को लिख दिया जाये कि हमारे टिकट का रुपया वापस भेजने की जरूरत नहीं है। उसे शरणार्थियों की रक्षा में लगा दिया जाये।

राजेश कुमार : (किंचित् मुस्कराकर) ठीक है, पाँच लाख रुपये न मिले, पाँच लाख आशीर्वाद मिलेंगे !

सरोज : (हँसकर) तो फिर आपको लाटरी का पहला इनाम मिलकर ही रहा !

राजेश कुमार : और क्या ? पाँच लाख···! पूरे पाँच लाख···

सरोज : (हँसकर वाक्य पूरा करते हुए प्रत्येक अक्षर पर जोर देकर।)

आ···शी···र्वा···द

[परदा गिरता है।]

'कैलेण्डर का आखिरी पन्ना'

पात्र-परिचय

बिहारीलाल : अवकाश-प्राप्त मास्टर	आयु ५५ वर्ष
मनोहर : बिहारीलाल का पुत्र	,, २२ ,,
नसीबन् : पड़ोस की बूढ़ी स्त्री	,, ७० ,,
सकीना : एक स्त्री (रहमान की माँ)	,, ४० ,,
हवलदार दिनेशसिंह : हवलदार	,, ३० ,,
शीला : नर्स	,, २० ,,
संपतलाल : मुनीम	,, ४५ ,,

[स्थान : इलाहाबाद का मुहल्ला—नखासकोना]

[तारीख और समय : ३१ दिसम्बर, १९६५, सन्ध्या ५ बजे]

कैलेण्डर का आखिरी पन्ना

[एक छोटे-से मकान का बाहरी कमरा। बहुत साधारण ढंग से सजा हुआ है। दीवार पर कैलेण्डर, जिसमें दिसम्बर महीने का पृष्ठ खुला हुआ है। तीन-चार चित्र, जिनमें महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू तथा लालबहादुर शास्त्री के चित्र हैं। बीचोबीच एक सामान्य दरी, जिस पर एक टेबल और दो साधारण-सी कुर्सियाँ हैं। बगल में एक पुरानी आरामकुर्सी, जिसके बेंत टूट रहे हैं। दाहिनी ओर बाहरी दरवाजा और मध्य में भीतर जाने का रास्ता है, जिस पर एक परदा पड़ा हुआ है। सन्ध्या के पाँच बजे हैं। मनोहर टेबल पर झुका हुआ कुछ लिख रहा है और उसका पिता, बिहारी, आरामकुर्सी पर बैठा हुआ कैलेण्डर की ओर देख रहा है। परदा उठने पर बिहारी अपना चश्मा उतारकर साफ करता हुआ कैलेण्डर की ओर बढ़ता है। उसके हाथ में छड़ी

है। वह कमजोरी से लड़खड़ाता हुआ चलकर कैलेण्डर के पास आता है।]

बिहारी : *(गिरे हुए स्वर से गिनता हुआ)* उनतीस...तीस... एकतीस...एकतीस दिसम्बर ! आखिरी तारीख और आखिरी पन्ना ! आज एकतीस तारीख है, मनोहर ?

मनोहर : (लिखते हुए) जी, इकतीस दिसम्बर !

बिहारी : इकतीस दिसम्बर ! आज ही के दिन...आज ही के दिन...

मनोहर : (रोकते हुए) बाबूजी !

बिहारी : मनोहर ! तुम मुझे हमेशा रोक देते हो। लेकिन सोचना तो नहीं रोक सकते ! ...तारीखें गिनता हूँ... कैलेण्डर देखता हूँ...वही तारीख...वही तारीख, जिसने...

मनोहर : बाबूजी, वही बातें आप क्यों सोचते हैं ? उसी तारीख को देखते हैं ? देखते-देखते...

बिहारी : अच्छी बात है, अब नहीं देखूंगा। और फिर, अब मेरी आँखें भी काम नहीं देतीं, मनोहर ! चश्मा तो पुराना हो ही गया। नया चश्मा लूं तो कुछ काम चले ! लेकिन अब नया चश्मा भी क्या करूंगा लेकर। कौन-से सुख के दिन देखने हैं ! एक-एक कर सुख के सब साथी छूट गये। तेरी माँ, तेरी बहन और अन्त में तेरा भाई भी। फिर वही बात सोचने लगा...आज ही के दिन...एकतीस तारीख को तेरा भाई छूटा। (गला भर आता है।) उसके कलेजे में गोली लगी। मैं वहाँ होता तो दुश्मनों से कहता—जालिमो ! पहले मेरे सीने में गोली मारो। मेरी छाती छेद डालो।

मनोहर : लेकिन दुश्मन क्यों छाती छेदता ? हम ही दुश्मन की छाती छेद देते...

बिहारी : तो मनोहर ! मेरे सुदर्शन ने भी यही किया होगा।

उसके सामने दुश्मनों की सारी फौज तितर-बितर हो गयी होगी। एक ही सिपाही बचा होगा जिसने उसकी छाती में गोली मारी होगी।

मनोहर : तो शहीदों पर आँसू बहाना कहाँ तक ठीक होगा? लेकिन आप आँसू बहाते रहते हैं। इसी तरह रोते-रोते आपने अपनी आँखें खराब कर ली। हमेशा कोई-न-कोई बात लेकर आप अपना मन खराब कर लेते हैं। (उठकर टहलते हुए) और आप ही को दुख है? मैं दुखी नहीं हूँ? आखिर वे मेरे भी तो भाई थे। हम दोनों भरती के दफ्तर में गये थे। सुदर्शन भैया ने कहा था कि हम दोनों में से एक को मोरचे पर जाना चाहिए। दूसरे को पिताजी की सेवा के लिए रहना चाहिए। मैंने जाना चाहा तो ज़िद करके मुझे वापस भेज दिया और खुद चले गय। अगर वे मुझे वापस न भेजते तो उनकी जगह देश के लिए मेरा बलिदान होता। मैं कितना भाग्यशाली होता! मुझे देश पर मरने नहीं दिया और खुद चले गये।

बिहारी : मेरा तो दोनों तरह से ही नुकसान होता, बेटा! जैसे तुम, वैसे सुदर्शन! मैं भी सुदर्शन के शहीद होने पर अपने को भाग्यशाली समझता हूँ, लेकिन अपने दिल के भीतर तड़पते हुए पिता के हृदय को कहाँ ले जाऊँ? फिर, बुढ़ापे में बेटे की मौत देखना! जैसे कपड़ा सिलते समय सुई की नोक टूट जाये! सुदर्शन नहीं रहा जैसे…जैसे मन्दिर से कोई मूर्ति उठा ले जाये और उस सूने मन्दिर में भूत-प्रेत रहने लगें। रात-दिन मन के भीतर कोई चीख उठा करती है। इसे कैसे चुप करूँ!

मनोहर : इस तरह दुःख करने से तो आपकी हालत और भी खराब हो जायेगी। फिर, सुदर्शन भैया की मृत्यु पर

तो सारे देश को गर्व है···

बिहारी : (तेज आवाज से) चुप रहो, मनोहर ! यह गर्व सिर्फ भाषण देते समय कह देने के लिए है। यह सिर्फ जनता के लिए एक नारा है। किसको उसके मरने का गर्व है ? कौन सौभाग्यशाली है ? दुश्मनों को मार भगाने के कौन सौभाग्यशाली है ? दुश्मनो को मार भगाने के के बाद किसी ने पूछा कि सुदर्शन का पिता और भाई किस तरह अपने दिन गुजार रहे हैं ? जिन्दगी सिर्फ आदर्शों मे नही पलती। दीन-दुनिया मे भूख-प्यास भी होती है। रहने के लिए घर चाहिए। पेट की आग के लिए अन्न चाहिए। किसी ने कुछ सहायता की ?

मनोहर : आज देश के सभी लोग दुखी हैं, बाबू !

बिहारी : दुखी तो सारी दुनिया है, लेकिन हमारे ही देश मे मामूली-से आदमी देश-सेवा का डंका पीटकर क्या से क्या हो गये ! कोई नेता हो गया, कोई एम० पी० हो गया, कोई विदेश मे ऊंचे पद पर पहुंच गया, लेकिन देश की इज्जत बचाने मे जो बेचारे गरीब मर गये उनके घर के लोग ? वे तो इन्सान की जिन्दगी भी नहीं बिता सकते। कौन कहां है—इसकी खोज-खबर लेनेवाला भी कोई है ?

मनोहर . देश के सामने बहुत-सी समस्याएँ हैं, बाबू !

बिहारी : सिर्फ हमारी समस्या नही है। सुदर्शन को एम० ए० तक पढ़ाने मे घर की जमीन बिक गयी। तुझे बी० ए० तक पढाने मे घर की पूँजी खत्म हो गयी। अब क्या रहा ! कहीं से कोई सहायता नही ! आज आठ बरस की उमर में एक सेठ की उल्टी-सीधी बही लिखा करता हूँ, तब कही खाने के लिए कुछ जुटा पाता हूँ।

मनोहर : मुझे खुद इस बात का दुःख है, बाबू, मेरा वश क्या है ! दस जगह नौकरी के लिए दौड़-धूप कर चुका, कहीं

कोई पूछता नहीं। जैसे ही मेरी नौकरी लगी, मैं आपको किसी सेठ की बही नही लिखने दूंगा। मैं फिर कोशिश कर रहा हूँ, बाबू, कि मुझे जल्दी ही कोई नौकरी मिल जाये।

बिहारी : दो बरस तो हो गये कोशिश करते। कही किसी ने पूछा भी नही। जिस तरह कीड़े-मकोड़े अपना खाना खोजते फिरते हैं उसी तरह इन्सान को भी अब अपना खाना खोजने के लिए गली-सड़कों पर निकलना पड़ेगा।

मनोहर : नही बाबू ! एक प्रकाशक से मेरी बात हो चुकी है। उसने तीस रुपये पर किताबों के प्रूफ देखने के लिए मुझे रखने की बात कही है। फिर यह जो मैं सुदर्शन भैया की जीवनी लिख रहा हूँ, यह प्रकाशित हो जाये तो प्रकाशक लोग मेरी लिखी किताबें छापने लगेंगे। तब रुपयों की कमी नही होगी।

बिहारी : यह तो बहुत दूर की बात है, बेटे ! तब तक मैं जिन्दा रहूँगा या नही—यह भगवान् जाने।

मनोहर : अभी आप बहुत दिनों तक जिन्दा रहेंगे। हाँ, एक बात कहूँ, बापू ? (ठहरकर) बही लिखने की मेहनत के वे जो सौ रुपये आपको मिले हैं न ? वे यदि सुदर्शन भैया की जीवनी को छपाने में लगा दिये जायें तो कैसा हो !

बिहारी : अरे, उस जीवनी को कौन पूछेगा ? सुदर्शन को ही किसने पूछा जो अब उसकी जीवनी को लोग पूछने लगेंगे ?

मनोहर : नही, बाबू ! अगर आज नही पूछा तो कल पूछेंगे। फिर मैंने यह जीवनी बड़ी मेहनत से लिखी है। मैं अभी उसे फिर से एक बार देख रहा था—कहीं-कहीं कुछ बातें जोड़नी थी।

बिहारी : अब जोड़ना क्या है, बेटा ! वह तो चला ही गया। कहीं भूले-भटके उसे कोई याद कर लेगा तो यह लोगों का बड़ा एहसान होगा। पहले तो उसके बलिदान की चर्चा ऐसी चली कि एक वही भारत का सपूत है। बाद में सब अपने-अपने रास्ते लगे, जैसे सुदर्शन नाम का कोई लडका था ही नहीं।

मनोहर : नही, बाबू ! ऐसी बात नही है। फिर, मेरी लिखी हुई इस जीवनी से सुदर्शन भैया की याद फिर ताज़ी हो जायेगी।

बिहारी : तो उसमें से तू मेरा नाम निकाल दे। मैं अपने को उसका योग्य पिता साबित नही कर सका। मैं देश का कोई काम नही कर सका। सौ रुपयों पर बही लिखनेवाला ! और वे सौ रुपये भी उस सेठ की मुट्ठी से ऐसी कठिनाई से निकलते हैं जैसे किसी नास्तिक के मुँह से राम का नाम।

मनोहर : खैर, ये बातें अब ज्यादा दिन नहीं रहेंगी। तो फिर आपने उन सौ रुपयों के बारे मे क्या सोचा ?

बिहारी : सोचूंगा बेटा ! यों सोचने के लिए बातों की क्या कमी !

मनोहर : अच्छी बात है, सोच लीजिएगा। तो फिर मैं जाता हूँ। शाम हो चुकी है। तरकारी-भाजी ले आऊं, खाने का प्रबन्ध भी तो करना है।

बिहारी : ठीक है। पैसा देता हूँ। (पॉकेट से निकालकर) ले यह दो रुपयों का नोट। आजकल तरकारी-भाजी के दाम भी तो इतने चढ गये हैं जैसे कोई नालायक बेटे को सिर चढ़ा ले। तरकारी क्या हो गयी, सोने-चाँदी का ज़ेवर हो गया।

मनोहर : रहने दीजिए, पिताजी ! मेरे पास कल के कुछ पैसे बचे हैं। उन्ही से आज का काम चला लूंगा।

बिहारी : तो सिर्फ अपने लिए ही लाना। मैं आज कुछ भी नहीं खाऊँगा। आज ही के दिन सुदर्शन को गोली लगी थी। ३१ दिसम्बर। शाम के पाँच बजे! (गला भर आता है।)

मनोहर : आप फिर दुखी हो गये, बाबू! अच्छा तो फिर मैं नहीं जाऊँगा।

बिहारी : नहीं, नहीं, मैं ठीक हूँ। तुम जाओ। ऐसे ही आज बार-बार उसकी याद हो उठती है।

मनोहर : तो आप अपने मन को सम्हालिए। अच्छा तो, मैं जाता हूँ। (फिर लौटकर) और हाँ, बाबू! जीवनी छपाने के लिए सौ रुपये की बात सोचिएगा।

बिहारी : सोचना क्या है! जैसा तू चाहेगा, कर दूँगा।

मनोहर : अच्छी बात है, तो फिर मैं जाता हूँ। (प्रस्थान)

[बिहारी कुछ क्षणों तक निश्चेष्ट बैठा रहता है। फिर कैलेण्डर की ओर देखता है। उदास स्वरों में फिर कहता है।]

बिहारी : ३१ दिसम्बर—शाम के पाँच बजे।

[फिर धीरे-धीरे चलकर टेबल के समीप की कुर्सी पर बैठता है। खुली हुई जीवनी के अन्तिम पृष्ठ पर उसकी दृष्टि पड़ती है। वह उसे चश्मा ठीक कर गहरी दृष्टि से देखने लगता है।]

बिहारी : यह सुदर्शन की जीवनी है—क्या होगा इस जीवनी का? मुरझाये हुए फूल पर कौन आँसू बहाता है—(ठहरकर) मनोहर ने अच्छा लिखा है—लालबहादुर शास्त्री का नाम? यह भी लिखा है? लालबहादुर शास्त्री कहते हैं—(पढ़ता है) 'हम शान्ति चाहते हैं, मित्रता चाहते हैं। लेकिन अगर कोई हमारे देश की एक इंच भूमि भी हमसे लेना चाहेगा तो हम युद्ध में

पीछे नहीं हटेंगे। हमारे जवान अपनी बाजुओं में ऐसी ताकत रखते हैं कि वे दुश्मनों के दांत खट्टे कर देंगे—और हमारे जवान ही सैनिक नहीं हैं, वे लोग भी सैनिक हैं जो अपने-अपने क्षेत्रों में ईमानदारी से काम करते हैं।' (सोचता हुआ) ईमानदारी से काम ? मैं सेठ की बही—सेठ की बही—ईमानदारी से लिखता हूँ ? अपनी जिन्दगी चलाने के लिए ये सौ रुपये ईमानदारी के हैं ? (सोचता है) ईमानदारी—के हैं ?

[नेपथ्य से किसी स्त्री के सिसकने की आवाज। उसे धैर्य देती हुई एक वृद्धा के शब्द।]

नसीबन् : अब न रोओ, बेटी ! जो कुछ होना था, सो तो हो गया ! (पुकारकर) अरे, बाबू बिहारीलाल !

बिहारी : कौन, नसीबन् बुआ ! क्या है ? यह कौन है जो फूट-फूटकर रो रही है ?

[युवती के अधिक सिसकने की आवाज।]

नसीबन् : न रोओ, बेटी ! कब तक रोती रहोगी ? अब रहमान बेटा तो तुझे चुपाने के लिए आने से रहा। वह तो बहादुरी से लड़कर खुदा को प्यारा हो गया ! वह तो दस सिपाहियों को मारकर मरा होगा।

बिहारी : (धीरे-धीरे मन-ही-मन) दस सिपाहियों को मारकर ? क्या इसका बेटा भी इसे छोड़ गया ? (नसीबन् से) बुआ ! यह कौन है ?

नसीबन् : अरे, तुम्हारे गाँव की ही तो लड़की है, सकीना ! तुम्हारे बाबू परमानन्द की गोद में खेली है।

बिहारी : अरे, वो सकीना ? बहन, तुम हो ! तुम्हें क्या हुआ ?

सकीना : (सिसकियाँ लेकर) तुम्हारा रहमान ! तुम्हें छोड़ गया, भैया (फिर सिसकियाँ लेती है।)

नसीबन् : अरे, वहाँ गया था, लड़ाई पर—वहाँ—अच्छा-सा

नाम है—नेफा। चीनियों ने हमला किया था न ? मैं उस वक्त वहीं था। उसने ऐसी बहादुरी से लड़ाई की कि चीनियों से भागते ही बना। लेकिन भागते हुए *कम्बख्तों की बन्दूक से जाने कैसी एक गोली छूट गयी* कि वो बेचारे रहमान के सीने मे लगी। बेचारा वही लेट रहा।

सकीना : मेरा बेटा खुदा की कसम खाकर गया था कि वह दुश्मनों को नेस्त-नाबूद कर मेरे कदमो मे सिर झुकायेगा। उसने दुश्मनों को तो नेस्त-नाबूद कर दिया, लेकिन वह मेरे कदमों में सिर झुकाने के लिए नहीं आया। मैं इन्तजार करती रही, वह तो नही आया। उसकी मौत की खबर -

बिहारी : (शून्य स्वर से) उसने देश के चरणों मे सिर झुका दिया, बहन !

सकीना : दुश्मनों को मारकर न जाने कितने जवान लौट आये। उनमें अगर रहमान भी होता तो खुदा की कुदरत मे कौन बात बिगड़ जाती।

बिहारी : (शून्य दृष्टि से देखते हुए) सुदर्शन भी नहीं आया !

नसीबन् : (आश्चर्य से) हाय ! बेटा सुदर्शन भी वही का हो गया ?

बिहारी : तुम्हें खबर नहीं है बुआ ? देश के हजारो शहीदो मे सुदर्शन ने भी नाम लिखा लिया।

नसीबन् : तो सुदर्शन और रहमान—दोनों ही चले गये ? हमारे गाँव के दो जवान।

बिहारी : हमारे सैकड़ों गाँवों के न जाने कितने जवान चले गये। सुदर्शन पिछले वर्ष इसी ३१ तारीख को चला गया। आज ही के दिन।

सकीना : तुम्हें कैसे धीरज दूँ, भैया !

बिहारी : अब किसी को धीरज देने की बात नहीं रह गयी,

बहन ! हमारे जवानों ने इतिहास में अपने देश का नाम अमर कर दिया। सोचता हूँ, जैसे मेरा सुदर्शन गया वैसे ही तुम्हारा रहमान और न जाने कितने माता-पिताओं के कितने सुदर्शन और रहमान चले गये। सबने देश की बलि-वेदी सजायी है। सब माता-पिताओं को तो प्रसन्न होना चाहिए कि उनके पुत्रों ने देश के संकट में देश का साथ दिया। अपने आँसू पोंछ डालो, बहन !

सकीना : भैया ! मुझ तो अब सुदर्शन का ज्यादा दुःख हो गया।

बिहारी : और अगर मैं यह कहूँ कि मुझे रहमान का अधिक दुःख हो गया तो तुम मुझ पर भरोसा करोगी ?

नसीबन् : दोनों को दोनों पर भरोसा है, बेटा ! लड़ाई में तो यह सब होता ही है। बाप-दादों के जमाने से लड़ाई चलती आ रही है। कोई लड़ाई में मर जाता था तो उसके नाम पर फूल बरसाये जाते थे। माँ कहती थी—बेटा, मेरे दूध को मत लजाना। मरना या मारकर आना। तो जैसा तब, वैसा अब ! है न, सकीना बेटी ?

सकीना : (धैर्य से) बुआ, तुम सच कहती हो।

नसीबन् : तो अब तुम्हारे जी को ढारस आ गया। मैं चलूँ। (चलने को उद्यत होती है। फिर लौटकर) हाँ बेटा बिहारीलाल, एक बात और है—जब तक रहमान मोर्चे पर था तब तक हर महीने बेटी सकीना के लिए खर्चा आता था। अब क्या होगा ? इसके तो कोई है भी नहीं। जिन्दगी कैसे कटेगी—इस पर भी सोचना।

बिहारी : ऐसा हाल तो बहुतों का है, बुआ ! लेकिन क्या सकीना बहन का कोई नहीं है ?

नसीबन् : तुम तो जानते हो, बेटा ! माँ-बाप का साया बहुत पहले ही उठ गया। ससुराल में भी कोई नहीं है। रहमान के अब्बा रहमान के होने के दूसरे साल ही

चले गये। जितना पैसा वो छोड़ गये थे, वो रहमान के पढने-पढ़ाने में खर्च हो गया। मलेटरी में रहमान की नौकरी लगी तो कुछ पैसा पास आया। अब वो भी खतम! बेटा, क्या सोच रहे हो?

बिहारी : कुछ नही, बुआ!

नसीबन् : तो अब सकीना बेटी को तो सब तरह से मुसीबतों ने घेर लिया।

सकीना : मुझे अपनी मुसीबतों में रहने दो, बुआ! मेरी बद-किस्मती का काला साया मुझ तक ही रहे—किसी को मेरे गुनाहों की सजा क्यों सहनी पड़े? (सिसकी)

बिहारी : नही, बहन! जब तक मैं जिन्दा हूँ तब तक तुम्हे मुसीबत क्यों हो? हम दोनो एक ही तरह के गुनह-गार हैं। या कहो—एक ही तरह के खुद-किस्मत हैं कि हमारे बेटों ने दिलेरी से देश की रक्षा की। तो तुम एक काम करो! गाँव मे कोई रोजगार करो।

सकीना : रोजगार के लिए मेरे पास पैसे कहाँ है, भैया!

बिहारी : मैं बतलाता हूँ। मेरे पास कुछ पैसे है। सौ रुपये। उनसे तुम दो चरखे और रुई खरीदो और दिन-भर सूत कातकर शाम को कपड़े बुननेवालो के हाथ बेच दो। गाधीजी हर असहाय स्त्री के लिए यही काम कराना चाहते थे।

सकीना : भैया, बेटे की याद करती जाऊँगी और सूत कातती जाऊँगी।

बिहारी : और इस तरह तुम इतना लम्बा सूत कात लोगी कि शायद वह बहिश्त मे बेटे रहमान के पास तक पहुँच जाये।

नसीबन् : वाह बेटे! खुदा तुम्हे लाख बरस की उमर दे। तुमने अपने गाँव की बहन के लिए भाई का असली फर्ज निभाया।

बिहारी : यह कुछ नही, बुग्रा ! ईश्वर इसीलिए तो पैसा देता है कि वह ज़रूरतमन्दो के काम आये । अच्छा रुको, मैं आया । (प्रस्थान)

नसीबन् : खुदा का लाख-लाख शुक्र है कि उसने ऐसे इन्सानों को पैदा किया जो फरिश्ते बनकर बन्दों की मदद करते हैं ।

सकीना . बुग्रा, मैं किस मुँह से भाई बिहारीलाल की तारीफ करूँ कि वो सुदर्शन को खोकर रहमान की माँ के दुख मे साथ दे रहे हैं ! बुग्रा, यह बतलाग्रो कि मैं यह रुपया लूँ या न लूं ?

नसीबन् . जिस हालत में तुम हो, बेटी, उस हालत में ले लेने के सिवाय और चारा ही क्या ?

सकीना : लेकिन बुग्रा ! मैं एक ही शर्त पर ले सकती हूँ कि सूत कातकर जो पैसा इकट्ठा करूँ, पहले मैं भाई बिहारी-लाल का कर्ज़ अदा करूँ ।

नसीबन् : खुश रहो, बेटी ! रहमान की माँ को ऐसा ही सोचना चाहिए ! लेकिन अभी बिहारीलाल से यह सब कहने की ज़रूरत नहीं है, नही तो वे समझेंगे कि बहन ने भाई के रिश्ते को भी रोज़गार समझ लिया ।

सकीना : अच्छी बात है। नही कहूँगी ।

[बिहारीलाल का प्रवेश ।]

बिहारी : यह लो बहन ! ये दस-दस रुपये के दस नोट हैं । गाधी मन्दिर से दो चरखे और रुई खरीद लेना। अगर और रुपयों की ज़रूरत हो तो मुझे खबर देना ।

सकीना : भाई का यह उपकार बहन हमेशा-हमेशा अपने सिर-आँखों पर रखेगी ।

[रुपये ले लेती है ।]

नसीबन् : तुम्हारे धरम से ही यह दुनिया टिकी है, बेटा ! तुम इन्सान नही, देवता हो, बिहारीलाल !

बिहारी : बुग्रा ! तुम समय-समय पर बहन सकीना की खबर देती रहना ।

नसीबन् : खुश रहो ! ग्रच्छा ग्रब हम लोग चलेंगे, बेटा !

बिहारी : ग्रच्छी बात है ! नमस्ते !

सकीना : नमस्ते !

नसीबन् : नमस्ते !

नसीबन् : नमस्ते ! मुझ कम्बख्त से कहते ही नही बनता ! बेटा, खुश रहो ।

[प्रस्थान]

बिहारी : (थोड़ी देर तक सोचता है । फिर ग्रपने-ग्राप) रहमान भी सुदर्शन के साथ चला गया । उसकी माँ—सकीना —ग्रब चरखा चलायेगी ग्रौर सूत कातेगी । ईश्वर करे, यह सूत बिछुडे हुग्रों को एक-दूसरे से जोड़ दे । (बाहर से ग्रावाज) यह मकान बिहारीलाल जी का है ?

बिहारी : (जोर से) कौन साहब हैं ?

(बाहर से) : मैं हवलदार दिनेशसिंह हूँ ।

बिहारी : भीतर ग्राइए ।

[हवलदार दिनेशसिंह का फौजी कदमों से प्रवेश—उसके साथ नर्स है ।]

दिनेश : (सलाम करते हुए) जयहिन्द !

बिहारी : जयहिन्द ! कहिए, कैसे कष्ट किया ?

दिनेश : जी, ग्राप सुदर्शन के पिताजी हैं ?

बिहारी : जी, मैं सुदर्शन का पिता बिहारीलाल हूँ । ग्राप बैठिए । (नर्स की ग्रोर संकेत करते हुए) ग्राप कौन हैं ?

नर्स : जी, मैं पटेल हास्पिटल की नर्स हूँ । मेरा नाम शीला है ।

बिहारी : नमस्ते । ग्राप इधर बैठ जाइए ।

दिनेश : बिहारीलालजी ! नेफा के मोरचे पर हवलदार सुदर्शन ने जो काम करके दिखलाया है उसके लिए मैं ग्रापको

बधाई देने आया हूँ। सरकार की तरफ से हवलदार सुदर्शन के लिए इनाम का ऐलान हुआ है। हम लोग नेफा की पहाड़ी के नीचे थे। चीनियों ने रात में ही गोलाबारी शुरू कर दी थी, लेकिन हम लोगों ने बड़ी सावधानी और चालाकी से काम किया था। एक जगह मोर्चा बनाकर दिनभर चहल-पहल रखी, लेकिन अँधेरा होने पर हवलदार सुदर्शन ने बड़ी बुद्धिमानी से उस मोर्चे से हटकर दूसरे स्थान पर मोर्चा बना लिया। चीनी सिपाही समझते रहे कि हम लोग पहलेवाले मोर्चे में ही हैं। वे अँधेरे में वहीं गोलाबारी करते रहे और हम लोग उनकी बेवकूफी पर हँसते रहे।

बिहारी : यह सूझ सुदर्शन ने की थी?

दिनेश : जी हाँ, सुदर्शन ने ही यह चाल सुझायी थी। सुबह तक गोलाबारी होती रही। चीनी समझते थे कि उन्होंने हमारा मोर्चा तोड़ दिया, लेकिन हम लोगों ने पौ फटते ही दूसरी ओर से हमला बोल दिया।

बिहारी : शाबाश!

दिनेश : बर्फ बहुत जमी थी। सुदर्शन ने यह किया कि रस्सी के सहारे एक छोटी पहाड़ी पर चढ़कर एक बढ़े हुए चीनी सिपाही को गोली मार दी। वह गिरा तो उन्होंने उसकी पोशाक पहन ली और आगे बढ़कर बायीं ओर से मशीनगन की ऐसी मार दी कि चीनी घबरा गये और मोर्चा छोड़कर भाग गये। भागते हुए एक चीनी सिपाही ने ऐसा हथगोला फेंका जिससे सुदर्शन का मुँह बुरी तरह झुलस गया और दाहिना हाथ उड़ गया।

बिहारी : कितनी तकलीफ हुई होगी उसे!

दिनेश : लेकिन हवलदार सुदर्शन ने उसकी जरा भी परवा

नही की और बायें हाथ से वे मशीनगन चलाते रहे जब तक कि चीनी मोर्चा बिलकुल साफ नही हो गया।

बिहारी : धन्य है मेरा लाल ! फिर क्या हुआ ?

दिनेश : उसके बाद हवलदार सुदर्शन बेहोश हो गये। उन्हें हम लोग उठाकर हास्पिटल में ले आये और शीलाजी ने उनकी मरहमपट्टी की।

शीला : लेकिन हम लोग उन्हें बचा नही सके।

बिहारी : अन्तिम समय मेरे बेटे ने कुछ कहा था ?

शीला : वे बहुत जख्मी हो गये थे। उन्हें दो दिनों बाद होश आया। होश आने पर उन्होने बड़े कष्ट से एक ही बात पूछी—दुश्मनों के कितने सिपाही मारे गये ? हवलदार दिनेशसिंह जी पास ही खड़े थे। उन्होंने कहा—बहादुर हवलदार ! तुमने सब सिपाही ही नही मारे दुश्मनों का मोर्चा भी तहस-नहस कर दिया। इस पर अपनी तकलीफों की परवा न करते हुए वे मुस्कराये और मुंह से निकल पड़ा—'जय जवान, जय किसान !'

बिहारी : मैं धन्य हूं। मेरे बेटे ने अपने को देश पर कुर्बान कर दिया।

शीला : उसके बाद वे दस घण्टे जिन्दा रहे। मैंने और अस्पताल की सिस्टर्स ने हर तरह से उनको बचाने की कोशिश की, लेकिन उन्हें बहुत गहरे जख्म लगे थे, वे किसी तरह भी नहीं बचाये जा सकते थे। अन्तिम समय में उन्होने आपको प्रणाम कहा और यह अपना फौजी चिह्न देकर कहा कि पिताजी से कहना कि उनके बेटे ने अपना कर्तव्य पूरा किया।

बिहारी : यह मेरे बेटे का स्मृति-चिह्न है, लाओ, मुझे दे दो। यही मेरे जीवन का सहारा रहेगा।

दिनेश : बिहारीलालजी, आप भाग्यशाली हैं कि आपने ऐसा

पुत्र देश के सम्मान में समर्पित कर दिया।

बिहारी : लेकिन यह सब सूचना मुझे इतने दिनों बाद क्यों दी जा रही है ? मैं अब तक नहीं जान सका था कि मेरे बेटे ने किस तरह युद्ध किया ?

दिनेश : युद्ध की सूचनाएँ गुप्त रखी जाती हैं, फिर मुझे खुद आपके पास आने का हुक्म हुआ था—मुझे छुट्टी नहीं मिल सकी, नर्स भी आना चाहती थी—उसके आने में भी कुछ कठिनाई हो रही थी।

शीला : मैं तो चाहती थी कि ऐसे बहादुर जवान के पिताजी के दर्शन करूँ और उनके अन्तिम शब्द आपसे कहूँ। किन्तु मोर्चे के अन्य जवानों की सेवा से जल्दी छुट्टी नहीं मिल सकी, क्षमा करें।

बिहारी : आप सचमुच देश की भाग्यशालिनी पुत्री हैं जो घायल जवानों की सेवा करती हैं और उन्हें अन्तिम समय में शान्ति पहुँचाती हैं।

दिनेश : अच्छा, अब आज्ञा दीजिए ! हवलदार सुदर्शन के परिवार के लिए सौ रुपया महीना पेंशन मंजूर हुई थी। उसके कागजात भी हमारे पास ठीक समय पर नहीं पहुँच सके। एक वर्ष की पेंशन बारह सौ रुपये आपकी सेवा में पेश करता हूँ।

बिहारी : यह बतलाइए दिनेशसिंहजी, कि हमारे गाँव का एक जवान अब्दुल रहमान भी लड़ाई में मारा गया, उसके बारे में कुछ बातें जानते हैं आप ?

दिनेश : क्या नाम ? अब्दुल रहमान ! हाँ, उसका नाम भी बहादुर जवानों की फेहरिस्त में है। उसने संगीनों की लड़ाई में करीब पचास चीनियों को जख्मी किया, आखिर एक संगीन की चोट, जो उसे पसली में लगी, वह खतरनाक सिद्ध हुई और वह वहीं गिर पड़ा।

बिहारी : अस्पताल में उसका इलाज नहीं हुआ ?

दिनेश : हम उसे लड़ाई के मैदान में नही पा सके। मालूम हुआ हमारे जितने जवान घायल हुए थे, उन्हें दुश्मन उठा ले गये। हम नहीं जानते अब्दुल रहमान की देख-रेख किस तरह हुई होगी, लेकिन कुछ दिनों बाद उस लड़ाई मे मरनेवालों की फेहरिश्त में अब्दुल रहमान का नाम था।

बिहारी : सरकार की तरफ से उसके परिवारवालों के लिए कुछ निर्णय नही हुआ ?

दिनेश : जरूर हुआ। उसके परिवारवालो के लिए पचास रुपये मासिक पेंशन मंजूर हुई है। उसकी कार्रवाई भी जल्दी होगी।

बिहारी : मैं एक प्रार्थना करना चाहता हूँ।

दिनेश : कहिए।

बिहारी : जैसी देर इस सौ रुपये की पेंशन के बारे में हुई, अगर वैसी ही देर पचास रुपये की पेंशन मे हो तो सौ रुपये की पेंशन के पचास रुपये रहमान की माँ को दे दिये जायें।

दिनेश : (लज्जित होकर) ओः देखिए, आप व्यंग्य न करें। हम जल्दी-से-जल्दी वह पेंशन अब्दुल रहमान के घर पहुँचायेंगे।

बिहारी : अब्दुल रहमान की माँ बहुत दुखी है और उसके जीवन का कोई सहारा नही है।

शीला : मैं उनसे भी भेंट करूँगी। उनके मकान का पता तो शायद हवलदार साहब के पास होगा।

दिनेश : हाँ, मेरे पास है। अच्छा अब हम लोग चलेंगे।

बिहारी : मेरी एक बात और सुनते जाइए हवलदार साहब !

दिनेश : कहिए !

बिहारी : देखिए ! यह पेंशन मै नही लूंगा। मेरे बेटे सुदर्शन ने अपने देश के लिए कुर्बानी की तो यह उसका धर्म था,

कर्तव्य था, जैसा उसने मरते समय कहा। मेरे लिए पेंशन लेने का अर्थ यह होगा कि मैंने अपने बेटे के बलिदान की कीमत ले ली। मैं यह कीमत नही चाहता। हर महीने यह पेंशन मुझे याद दिलायेगी कि मेरे बेटे का रक्त इन रुपयों मे लिपटा हुआ है। मैं अपाहिज नही हूँ, अभी काम कर सकता हूँ, ईमानदारी से काम कर सकता हूँ। मेरा दूसरा बेटा भी नौकरी कर सकता है, फिर पेंशन की क्या जरूरत है ?

दिनेश : आप बहुत समझदार आदमी हैं बिहारीलालजी ! लेकिन सरकार ने तो आपके बेटे की बहादुरी का सम्मान करते हुए यह पेंशन मजूर की है।

बिहारी : मैं सरकार को धन्यवाद देता हूँ कि उसने मेरे बेटे की बहादुरी को समझा और उसका सम्मान किया, लेकिन पिता का हृदय इस सम्मान को सिर-माथे लेकर भी वापस करना चाहता है।

दिनेश : सरकार इसे क्या समझेगी, मैं कह नही सकता।

बिहारी : तो ऐसा कीजिए हवलदार साहब, कि इस पेंशन के रुपयों से नेफा के अस्पताल में घायल हुए जवानों के लिए सुदर्शन के नाम से दो-एक कमरे बनवा दीजिए। हर महीने की पेंशन से काफी रुपये हो सकते है।

शीला : आपने मेरे मन की बात कही बाबूजी ! इससे सुदर्शन जी का नाम भी अमर हो जायेगा।

दिनेश : हाँ, यह हो सकता है। अच्छा, मैं सरकार को इस सम्बन्ध मे लिखूंगा।

बिहारी : तो अभी ये रुपये ले जाइए।

दिनेश : ठीक है। सचमुच आप सुदर्शन के योग्य पिताजी हैं। मैं आपके प्रस्ताव को सरकार तक पहुँचाऊँगा और आपको सूचना दूंगा। अच्छा जय हिन्द !

शीला : जय हिन्द !

बिहारी : जय हिन्द !

बिहारी : (सोचते हुए) बलिदान की पेंशन···रक्त और रुपया···देश-सेवा और पुरस्कार···यह नहीं होगा, यह नहीं होगा।

[मनोहर का प्रवेश।]

मनोहर : बाबू, कुछ देर लग गयी। तरकारियाँ लेकर लौट रहा था कि प्रकाशक महोदय कमलेशजी मिल गये। उन्होंने कल से मुझे काम पर बुलाया है।···बाबू ! आप मेरी बात नहीं सुन रहे हैं ?

बिहारी : (चौंककर) एँ, क्या कहा !

मनोहर : आप क्या सोच रहे हैं ? आप मेरी बात नहीं सुन रहे हैं ?

बिहारी : सुन रहा हूँ···

मनोहर : तो आपको यह बात सुनकर खुशी नहीं हुई कि मेरी नौकरी लग गयी ?

बिहारी : (अन्यमनस्कता से) खुशी क्यों नहीं होगी ?

मनोहर : ठीक है, तो कमलेशजी ने मुझे कल ही काम पर बुलाया है। मैं ये तरकारियाँ उस कमरे में रख दूँ···

बिहारी : रख दो।

[मनोहर तरकारिताँ रखने जाता है।]

बिहारी : सुदर्शन की बहादुरी पर सौ रुपये की पेंशन और मनोहर के परिश्रम पर तीस रुपये की नौकरी। जीवन में संघर्ष के मूल्यों में कितना अन्तर है ?

मनोहर : (नेपथ्य से बोलता हुआ आता है) तो बाबू ! मैंने उनसे सुदर्शन भैया की जीवनी के प्रकाशन की बात भी कही। उन्होंने कहा—उसमें तीन सौ रुपयों का खर्च है—भैया की जीवनी छोटी तो है ही···तो उन्होंने कहा—कि अगर तुम डेढ़ सौ रुपया मिला दो तो मैं अगले हफ्ते में ही उसे छाप दूँगा। मैंने कहा कि मेरे

बाबू के पास सौ रुपये ही हैं। अगर सौ रुपये स्वीकार कर लें तो मैं कल ही सुबह आपको दे दूंगा (रुककर) आप चुप क्यों हैं बाबू ?

बिहारी : जीवनी छपाने में इतनी जल्दी क्यों है ? मुझे उससे अभी बहुत-कुछ सीखना है।

मनोहर : तो मेरा लिखना सार्थक हुआ। तब तो उसे जल्द छपाना चाहिए। यह तो संयोग की बात है कि कमलेशजी ने अपने खर्च से उसे तुरन्त छापने की बात मान ली, नहीं तो अभी छपाने की बात ही नहीं थी। तो बाबू, कल आप मुझे सौ रुपये दे दें तो मैं उन्हें कमलेशजी को देकर रसीद ले लूं।

बिहारी : सौ रुपये क्या, मैं तुम्हें बारह सौ रुपये दे सकता था, लेकिन मैंने बारह सौ रुपये भी स्वीकार नहीं किये।

मनोहर : बारह सौ ?

बिहारी : हां, बारह सौ। अभी हवलदार दिनेशसिंहजी आये थे। उन्होंने सूचना दी कि सुदर्शन नेफा के मोर्चे पर बड़ी वीरता से लड़ा। उसने युद्ध के मैदान में इतनी सूझ-बूझ दिखलाई कि अकेले ही एक चीनी मोर्चे को तहस-नहस कर दिया, लेकिन एक हथगोले से उसका मुंह झुलस गया और उसने अपने प्राण देश की बलि-वेदी पर समर्पित कर दिये।

मनोहर : सुदर्शन भैया वीरता दिखलाने में सबसे आगे रहते थे, ऐसा उनका स्वभाव ही था।

बिहारी : उसकी वीरता पर प्रसन्न होकर भारत-सरकार ने उसके परिवार के लिए सौ रुपये मासिक पेंशन मंजूर की। एक वर्ष तक हम लोगों को इसकी खबर ही नहीं मिल सकी। अभी कुछ देर पहले हवलदार दिनेशसिंह यह सूचना लेकर आये थे।

मनोहर : हां, जब मैं बाजार से लौट रहा था तो थाने पर मैं

पास ही वे दिखलाई दिये थे। उनके साथ एक स्त्री भी थी।

बिहारी : वह नर्स थी जिसने घायल सुदर्शन की सेवा-सुश्रूषा की थी। बेचारी उन्हें नहीं बचा सकी। वह भी इसकी सूचना देने आयी थी।

मनोहर : बड़ी देर में उन्होने यह सूचना दी!

बिहारी : फौजी सूचनाएँ, कहते हैं, रुक-रुककर आती हैं। वे अपने साथ एक वर्ष की पेंशन बारह सौ रुपये लाये थे।

मनोहर : तो वे यही बारह सौ रुपये थे जो आपने स्वीकार नही किये ?

बिहारी : मैंने कहा कि मैं सुदर्शन की वीरता रुपयों पर नहीं तौलना चाहता। मैंने उस पेंशन का सारा रुपया अस्पताल को दान दे दिया जिससे सुदर्शन की स्मृति में घायल सिपाहियों के लिए-दो चार कमरे बनवा दिये जायें।

मनोहर : बाबू वाह! आपने बहुत अच्छा सोचा। यह कार्य तो उनकी जीवनी छपने से भी अधिक मूल्यवान है। भैया सुदर्शन की वीरता का इससे अच्छा और क्या स्मारक हो सकता है।

बिहारी : लेकिन तूने जीवनी बहुत अच्छी लिखी है मनोहर ? तेरे जाने के बाद मैंने उसे पढ़ा तो श्री लालबहादुर शास्त्री के उत्तेजनापूर्ण शब्दों से मैं जैसे नींद से जाग उठा। उन्होने उसे ही सैनिक नहीं कहा जो युद्ध-भूमि में लड़ता है, उसे भी सैनिक कहा है जो ईमानदारी से अपने क्षेत्र में कर्तव्य का पालन करता है। और इस तरह से हम लोग भी अपने-अपने क्षेत्र में सैनिक बन सकते हैं।

मनोहर : *शास्त्रीजी की यह बात समस्त देश के लिए संजीवनी*

मन्य है।

बिहारी : इसीलिए अब मैं किसी दान या पुरस्कार पर निर्भर नहीं रहना चाहता। मैं इस उमर मे भी मेहनत करूँगा। मास्टर रहा हूँ, लड़की को पढ़ाऊँगा, उनका ट्यूशन करूँगा और इस प्रकार अपनी मेहनत से जो रुपया कमाऊँगा उससे तेरी लिखी हुई सुदर्शन की जीवनी प्रकाशित कराऊँगा…

मनोहर : बाबू ! आपने कितने उत्साह की बातें कही हैं। जब आप इस अवस्था मे परिश्रम करेंगे तो मुझे तो और भी अधिक परिश्रम करना चाहिए और मैं आपको वचन देता हूँ कि मैं अपने क्षेत्र में इतना परिश्रम करूँगा कि लोग कहेंगे कि इसने सुदर्शन के योग्य भाई बनने का प्रमाण दिया है।

बिहारी : तेरी यह बात सुनकर मैं बहुत प्रसन्न हूँ मनोहर ! जब तू इतना अधिक परिश्रम करेगा तो सुदर्शन की जीवनी और भी अच्छे ढंग से प्रकाशित होगी। अच्छा, अब तुम जाओ और भोजन की तैयारी करो।

मनोहर : अच्छी बात है। आज मैं बहुत प्रसन्न हूँ बाबू ! अच्छा स्वादिष्ट भोजन तैयार करूँगा। मैं जाता हूँ।

बिहारी : जाओ।

[मनोहर का प्रस्थान]

[नेपथ्य से संपतलाल मुनीम की आवाज सुन पड़ती है।]

संपतलाल : (नेपथ्य से) अजी मास्टरजी ! थाने तो घणी देर कर दीनी। (प्रवेश कर) छा बजे आवणे की बात कह दीनी थी, गोपालजी की दया से, सो अब तक पधारणे की सीला नहीं भई। सेठजी, थारे आवणे की बाट अगोर रहे हैं, गोपालजी की दया से।

बिहारी : आज से मैंने आपकी दुकान का काम छोड़ दिया, संपत-

लालजी ! सेठजी से मेरा नमस्कार कहिएगा।

संपतलाल : अरे माइटरजी ! नमस्कार तो श्रीगोपालजी के मन्दिर में शमर्पण होता है। शेठजी तो आपकी खातिर बहुत ही बेचैंण हैं।

बिहारी : उनसे कहिए कि वे अपनी वेचैंनी गोपालजी के मन्दिर मे समर्पण करें।

संपतलाल : अरे नहीं, बिहारीलालजी, कल इनकमटैंक्स जी के निसपिट्टर साहब पधार रहे है। तिणके सोही आपने जो हिशाब का रजट्टर बणाया है शो दिखलाया जाणे को है।

बिहारी : मुझसे नकली रजिस्टर बनवाया गया था, उसके लिए मैं प्रायश्चित्त करूंगा।

संपतलाल : ये पायचित्त का होवें है बिहारीलालजी। उशके लिए कुछ पूजण-वूजण होवें हो, तो हुकुम फरमावो। पाय-चित्तभी कोई पूजण विधान दीखें है ? नही तो गोपाल जी की दया से आपके पायन पे चित्त तो लोटणा ही है।

बिहारी : आप अपना समय नष्ट मत कीजिए—यहाँ से जाइए।

संपतलाल : गोपालजी की दया शे नाराजी-फाराजी दूर करो बिहारीलालजी। शेठजी ने सौ रुपये नजर को दीने है शो गोपालजी की दया से ग्रहण करो और शेठजी को रजिट्टर···

बिहारी : आप ले जाइए ये सौ रुपये···मुझे इनकी जरूरत नही है। चोरबाजारी और बेईमानी का रुपया मुझे नही चाहिए।

संपतलाल : चोरबाजारी तो आज का धरम है, गोपालजी की दया से बिहारीलालजी !

बिहारी : आप लोगों ने ही उसे धरम बनाया है।

संपतलाल : आज तो गोपालजी की दया से आप कोपभवन मे

विराजे हैं। अच्छा तो सेठजी से क्या संदेसणा बहोण दूं ?

बिहारी : कह दीजिए, आज से मैंने उनका काम छोड दिया।

संपतलाल : और ये सौ रुपये गोपालजी की दया से ?

बिहारी : यह उनके चोर-घर की तिजोरी में रख दीजिए।

संपतलाल : हे गोपालजी रच्छया करो। आज तुम्हारी माखन-चोरी लीला को लोग बदनाम कर रहे हैं। उसको लोग चोरबाजारी लीला कहते हैं। बंसी के बजैया ! हम लोग तो तुम्हारी लीला के मुताबक ही काम करते हैं, गोपालजी की दया से।

बिहारी . अच्छा, अब आप जाइए।

संपतलाल : गोपालजी सदा सहाय रहें। (प्रस्थान)

बिहारी : (पुकारकर) मनोहर !

(नेपथ्य से) : आया बाबू ! (प्रवेश कर) कहिए !

बिहारी : मनोहर ! तुमने सुदर्शन की जीवनी मे लालबहादुर शास्त्री की एक बात बहुत अच्छी लिखी है—"हमारे जवान ही सैनिक नही हैं, वे लोग भी सैनिक है जो अपने-अपने क्षेत्रों में ईमानदारी से काम करते हैं।" मेरा सुदर्शन जवान था और उसने अपने क्षेत्र मे ईमानदारी से काम किया, लेकिन मैने अपने क्षेत्र मे ईमानदारी से काम नही किया, इसलिए आज से मैंने सेठ विरधीचन्द की नौकरी छोड़ दी।

मनोहर : नौकरी छोड दी ?

बिहारी : हां, अभी मुनीम संपतलाल आया था, वह मुझे इनकम-टैक्स इन्सपेक्टर के सामने गलत रजिस्टर रखवाने के सौ रुपये भी दे रहा था। मैने उसे भी वापस कर दिया।

मनोहर, : बाबू, फिर आप क्या करेंगे और सुदर्शन भैया की जीवनी कैसे छपेगी ?

बिहारी : मैं ईमानदारी से लड़कों का ट्यूशन करूँगा और भूखा

रहकर भी सुदर्शन की जीवनी छपाऊँगा। यदि उसकी मृत्यु का दिन कैलेण्डर का आखिरी पन्ना था तो आज मेरे कष्टपूर्ण जीवन के कैलेण्डर का भी आखिरी पन्ना है। लालबहादुर शास्त्री के वाक्यों ने मुझे नये जीवन का नया दिन दिया है।